प्रकाशक—

चौधरी एण्ड सन्स

बनारस

२॥) परदेसी	२॥) इशारा	४॥) चूड़ियाँ
२॥) जलन	३॥।) निर्मोही	३॥) भँवरा
४) लवंग	४) मंजिल	३॥) आहुति
४॥) नीलम	२॥) पागल	३॥) लाल रेखा
२॥) अकेला	३॥) पपिहरा	२॥) बसेरा
३॥) पारस	३) कुंकुम	४) पगडंडी
२॥) परदेसी (द्वि०खं०)	३॥) धड़कन	४) अँगड़ाई
३॥) मुमताज	३॥।) खँडहर	३) पीली कोठी
३॥) पायल	३) सोलह अगस्त	१॥) जाड़े की रात
३) अनार कली	४॥) आत्मदाह	२) नरमेघ
२) नीलमणि	३॥) दो किनारे	२॥) पपीहा बोले आधी रात
२॥) चौरंगी	२॥) सहारा	२॥।) साँवरिया
२॥) काली घटा	२॥) आशियाना	३) ललकार
२।) मंदिर की नर्तकी	१॥) मिस्टर तिवारी का टेलीफोन	
१॥) मेरे राम का फैसला	२।) बेचारे मुंशीजी	२।) पानी पाँड़े
२॥) महाकवि भांड	२॥) त्याग	१॥।) राजपूतनन्दिनी
१॥।) रोटी	३) बिसवीं वीरांगना	२।) मनोरमा
२) बागी की बेटी [जब्त]	२) प्यासी तलवार	१॥) राजकुमारी
२।) हाहाकार	१॥) होटल में खून	२) नदी में लाश
१॥) मन की पीर	१॥।) बड़े चाचाजी (रविन्द्र)	

मुद्रक—

बम्बई प्रिन्टिङ्ग काटेज

बनारस

"पानी पाँड़े"

तब—

सुनिये घटना इतिहासमयी
सन् एकतालिस था, मास मई
था मुझे लखनऊ तक जाना
मैके से था उनको लाना

खाना खाकर, पानी पीकर
पहने कपड़े सामान लिया
डब्बे में रख जलपान लिया
पनडब्बे में रख पान लिया।

ताँगा पहुँचा जब तीन मील
तब मुझे मिला मेहरा सुशील
बोला—"देहरा तो छूट गया
मानो मुझको कर शूट गया!

ताँगे वाला उत्साही था
बोला—हुजूर कुछ हर्ज नहीं
जाता है एक पसिंजर भी
उससे जाना क्या फर्ज नहीं?

तब मैंने ताँगे वाले के
मुख को देखो, मस्ताना था!
गाड़ी क्यों छूटी, समझ गया,
वह ताँगे वाला काना था!!

× × ×

भूख मार, बात उसकी मानी
उससे ही चलने की ठानी
स्टेशन पहुँचा, दम फूल गया
पानी लाना था भूल गया!

थी साथ सुराही नहीं हाय
मैं पूरा आज कुराही था।
वे होतीं स्मरण दिला देतीं,
इस बार दोष अपना ही था।

उस पर था भीषण मई मास
थी हरी एक भी नहीं घास।
लू की लपटें थीं आसपास
मानों क्रोधित हो रही सास!!

पथ में कितने टेसन, आये
पर सबके सब थे बेपानी!
थे कुएँ दूर पर जल वाले
टेसन थे केवल नल—वाले

नल में जल का था नाम नहीं
यात्री सब कौं कौ करते थे!
टोंटी नमेठते थे वे जब
बच्चे सब सौं सौं करते थे!!

कितनी वृद्धाएँ विकल हुईं
कितने बच्चे वेहोश हुए
कितने गालियाँ लगे बकने
कितने निराश खामोश हुए!

दो एक जगह, नल में जल था
पर वह जल था पूरा 'अदहन'!
पीना तो उसका दूर रहा
छूना तक होता नहीं सहन!!

मौसी, काकी, फूफी, अम्मी
भैया, चाची, मामी, नानी
जीजी, ताई, से माँग रहे
बच्चे बस थे पानी-पानी!!

पानी पानी पानी अब्बा!
पानी पानी पानी बब्बा!
पानी पानी पानी पानी!
चिल्लाता था सारा डब्बा!

यों विफल छटपटाते रोते
सिर धुनते सब पछताते थे !
पानी पाँड़े 'पानी पाँड़े'
पानी पाँड़े चिल्लाते थे !!

जब स्टेशन आगे बढ़ने पर
गुलजार गोसाई गंज मिला।
तब जाकर सब की प्यास मिटी
सबका तब मानस कंज खिला॥

देखा सबने ज्यों ही कोई
बाभन देवता हैं स्थूल काय !
लोटा बालटी लिये कर में
कन्धे पर गमछा रहा छाय !

सोचा साढ़े साती उतरे
सिर से, अब होगा भाग्योदय !
सब ने बस जय जय कार किया
बोले, "पानी पाँड़े" की जय !!

"पानी पाँड़े पानी पाँड़े"
पानी पानी पानी पानी
इस ओर, इधर, इस ओर, इधर,
इसमें, इसमें, भो भर दानी !'

पानी पाँड़े था एक मगर
सबको पानी पहुँचाता था।
उन सब की चीख पुकारों से
मन में न तनिक घबड़ाता था!

चश्मे के भीतर से उसकी
हँसती थीं आँखें मन्द मन्द।
कर उसके जल बरसाते थे
आँखें बरसाती थीं मरन्द!

बुड्ढा था पर अब के जवान
दस बीस झटक दे सकता था!
कितने ही कुस्ती बाजों को
वह वृद्ध पटक दे सकता था!

खाया था दूध मलाई, घी
रुपये का तब था डेढ़ सेर!
अब शुद्ध डालडा का सेवन!
है समय बीतते नहीं देर!

'राशन! किसको कहते हैं यह
'पानी पाँड़े तब क्या जाने!
पौष्टिक भोजन करता सबको,
पानी देना बस व्रत माने!!

हाँ, दौड़ दौड़ वह घूम घूम,
सबको ही पानी दे आया।
दस मिनट रुकी गाड़ी थी पर
सबने मन भर पानी पाया॥

जब गाड़ी खुली सभी के मन
हर्षित थे, सब थे अब निर्भय!
सब एक साथ ही बोल उठे
बोलो पानी पाँड़े की जय!!

क्या सुन्दर, स्वच्छ, मधुर, शीतल
कूपोदक था, मिट गयी प्यास!
पानी पाँड़े की दृपि-वृष्टि—
से हार रह गया मई मास!!

अब—

अब भी मैं उनको लेने को
जब तब लखनऊ चला जाता !
पर पानी पाँड़े का सुन्दर
दर्शन है हाय न हो पाता !

सुनता हूँ कुछ नेताओं ने
उस पर कुछ एतराज किया।
"हिन्दू पानी मुसलिम पानी ने
हमसे दूर स्वराज किया !"

"अब पानी पाँड़े का कोई
सेकुलर भारत में नहीं स्थान !
कट्टर अथवा जेनरल भोजन
पानी का बस होगा विधान !"

सोडा लेमनेड आइस की ही
स्टेशन पर है अब धूम धाम !
'कट्टर' 'जेनरल' कण्डाल धरे
रहते स्टेशन 'पर निकट धाम !

[ज]

जो चाहे जाकर पी लेता
अपने से है जेनरल पानी!
दुर्गन्ध युक्त, बासी, सड़ियल
यह प्रगतिवाद है लासानी!!

कण्डालों और कमोरों में
सब के ही अब जूठे गिलास!
पाते प्रवेश, टी० बी०—प्रचार
होता रहता है आस पास!

कर आज 'वनस्पति' का भोजन
पी ऊपर से जनरल पानी!
टी० बी० का करते हैं स्वागत
ये सब सेकुलर हिन्दुस्तानी।

यदि चाहो सचमुच स्वस्थ रहे
यह देश—शुद्धता फैलाओ!
भण्डा सराध को दूर करो
पानी पाँड़े को फिर लाओ!

यह जेनरलपना विदेशीपन
है भारतीय पानी पाँड़े।
पानी पाँड़े की जय बोलो
हैं माननीय पानी पाँड़े॥

पानी पाँड़े

प्रार्थना

हे प्रभो ! wauted[1]—प्रकाशक, पोष्ट मुझको दीजिये ।
और जितने कैण्डिडेट[2] हों दूर उनको कीजिये ॥
लीजिये मुझको शरण में मोस्ट[3] ओबिडियेण्ट[4] हूँ ।
आपके सर्वेण्ट[5] के सर्वेण्ट का सर्वेण्ट हूँ ॥
पास एम० ए० कर चुका हूँ, आज कल बेकार हूँ ।
बाप माँ की नजर में, मैं 'जॅगरचोर' चमार हूँ ॥
कीजिये ऐसी कृपा, अब आप सा मौला मिले ।
और बीबी से मुझे गाली न 'सरबौला' मिले ॥

---

१ नौकरी का विज्ञापन २ उम्मीदवार ३ सबसे अधिक ४ आज्ञाकारी ५ नौकर ।

हैट चश्मा से सुशोभित आपकी मुख-कान्ति है।
'केन'[६] कर का, क्लर्क मंडल की मिटाता क्लान्ति है॥
नित्य पहली डेट[७] को कर आपकी पदवन्दना।
लोग अपनी टेट करते गर्म हैं उन्नतमना॥
आप 'ऑफिस' के मनोहर राज्य में आसीन हैं।
सैकड़ों ही क्लर्क-गण पद-वन्दना में लीन हैं॥
कीजिये ऐसी कृपा, मैं नित्य आभारी बनूं।
आपका नौकर बनूँ, नाऊ बनूं, बारी बनूं॥

— —

६ बेंत ७ तारीख।

"प्रेम-संगीत"

तुम सिनेमा-ऐक्ट्रेस हो सुन्दर,
मैं होटल का दरबान प्रिये !
तुम 'ब्लाटिंग[१] पेपर' सी सुफेद,
मैं "ब्लैक इंक" हूँ 'स्वान' प्रिये !!

मैं 'एबीसीनिया' सा दुर्बल,
तुम 'इटली' हो बलवान प्रिये !
मत पकड़ो तुम चुटिया मेरी,
मैं पकड़ूँ दोनो कान प्रिये !!

दफ्तर से वापस आने पर,
करना सुख का सामान प्रिये !
'द्राक्षासव' से बढ़ कर 'टॉनिक'[२]
है तेरी मृदु मुस्कान प्रिये !!

---

१ सोख्ता २ शक्ति वर्धक दवा ।

तुम अपने अधरों से छू दो,
ये अधर हमारे प्रान-प्रिये !
लालिमा—लीन हो जायेंगे,
क्या होगा खाकर पान प्रिये !!

कपड़ों लत्तो गहनों के मिस
सर पर सवार हो आन प्रिये !
इस मेरे कोमल सर को क्या,
समझा है कठिन मचान प्रिये !!

भीगी बिल्ली बन जाता हूँ,
होतीं जब क्रुद्ध महान प्रिये !
मैं चकित 'चीन' सा दीन बना
तुम बनी विकट 'जापान' प्रिये !!

ये अधर हमारे हैं 'अछूत',
तुम 'अम्बेडकर' समान प्रिये।
जो चाहो तुम इनको कर दो,
सिख मुस्लिम या क्रिस्तान प्रिये !!

तुम पा सकती हो दो हज़ार,
मैं कोरा कवि—सम्मान प्रिये !
तुम दोहावली 'दुलारे' की,
मैं हूँ 'हरिऔध' सुजान प्रिये !!

मैं और तुम

मैं महा मरुस्थल महारवाड़,
तुम शिमला और मंसूरी।
मैं महुए का ठर्रा केवल,
तुम हो शराब अंगूरी॥
तुम फ्रेञ्च[1] और मैं रूसी,[2]
तुम हो लेमोनेड, मैं नूसी!!

मैं बिना तेल का हूँ मसाल,
तुम हो बिजली का लटटू।
तुम लेटेस्ट माडेल फोर्ड कार,[3]
मैं सड़ियल अड़ियल टट्टू॥
तुम मैजिस्ट्रेट, मैं हूँ रईस!
मैं हूँ पब्लिक, तुम हो पुलीस!!

---

१ फ्रान्स निवासी २ रूस देश निवासी ३ सबसे नये ढंग की मोटर।

मैं हूँ घोंघा घनघोर प्रिये!
तुम मंजुल मुक्ता-माला!
मैं हूँ चोखा चौपदा देवि!
'तुम बच्चन की 'मधुशाला'॥

तुम हो गोरी, मैं हब्शी[१]!
तुम हो विस्कुट, मैं लप्सी!!

तुम टॉकी सिनेमा हो सुन्दर,
मै हूँ तुरुही का पोपा।
तुम हो कोयल की स्वर-लहरी,
मैं भेलूपुर[२] का भोंपा॥
मैं कक्षा तुम मॉनीटर[३]।
मैं पाइप, तुम हो मीटर[४]!!

---

१ एक जंगली जाति।

२ काशी का एक मुहल्ला, यहाँ बिजली का पावर हाउस है।

३ कक्षा की व्यवस्था का निरीक्षक विद्यार्थी।

४ पानी के कल के ऊपर लगा हुआ पानी-खर्च नापने का यन्त्र।

तुम गुपचुप रसगुल्ला सफेद,
मैं रेवड़ा और अनरसा।
तुम शानदार पिस्तौल प्रिये!
मैं जीर्ण फावड़ा फरसा!!
तुम वैकेंसी[१], मैं कैण्डीडेट[२]!
मैं हूँ पोगा, तुम अप-टु-डेट[३]!!

मैं रजपूती साफा भरकम,
तुम टोपी दिव्य दुपल्ली।
मैं हूँ खोजवाँ[४] का गुड़हट्टा,
तुम खरी कचौड़ी[५] गल्ली॥
मैं कॉटेज[६] तुम हो कैसिल[७]!
मैं हैण्डप्रेस[८], तुम ट्रेडिल[९]!!

---

१ खाली नौकरी।

२ उम्मीदवार।

३ नयी रोशनी का।

४ काशी का एक मुहल्ला, यहाँ गल्ले तथा गुड़ आदि की दूकानें अधिकतर हैं। ५ काशी का एक मुहल्ला, यहाँ मिठाई पूरी की दूकानें हैं। ६ झोपड़ी ७ किला ८ हाथ का प्रेस ९ नये ढंग की छापने की मशीन।

तुम सजी लखनवी 'सुधा' सरस,
मैं हूँ पटने का 'योगी'।
तुम क्षीण पारसी बाला हो,
मैं स्थूल सेठ रस्तोगी॥
तुम हो बाबर, मैं साँगा।
मैं हूँ एक्का, तुम ताँगा[1]!!
मैं विधवाश्रम का हूँ मन्त्री,
तुम हो विवाह—विज्ञापन!
मैं बैठा ठाला हूँ एम० ए०,
तुम दस रुपये की 'ट्यूशन'॥
तुम 'बेत' और मैं 'सोटा'।
तुम 'जरी' और मैं 'गोटा'॥
तुम ठुकराती हो बार बार,
करती हो क्यों अवहेलना।
मैं हृत्तन्त्री का तार प्रिये!
तुम तन्मयता की बेला।
तुम ब्रजभाषा, मैं डिंगल[2]!
तुम रीतिकाव्य, मैं पिंगल!!

---

१ पाठान्तर—तुम हो ताजा मैं बासी।
तुम अफ़सर, मैं चपरासी॥

२ एक प्रकार की राजपुतानी भाषा।

मैं पड़ा तुम्हारे हूँ पीछे,
अब लेकर लम्बी लाठी !
तुम रामायण की हो टीका,
मैं राम नरेश त्रिपाठी ॥

मैं कोड़ पत्र, तुम अलबम[१]।
मैं हूँ सूरन, तुम सलजम !!
तुम अग्रलेख सम्पादकीय,
मैं केवल अन्तिम पन्ना।
तुम दिव्य दुग्ध की धवलधार,
मैं फटा पुराना छन्ना[२] !
तुम फ्लूट[३] और मैं तासा[४],
तुम होटल हो, मैं 'बासा'[५] ॥
तुम हो मिस्ट्रेस[६] मेरे घर की।
मैं हूं केवल चपरासी !
तुम हो छलना ललना ललाम,
मैं बेवकूफ विश्वासी।
तुम हो 'मिस', मैं हूँ दण्डी।
मैं हूँ कुर्ता, तुम वण्डी ॥

---

१ चित्रों का समूह।

२ दूध छानने की चलनी या कपड़े का टुकड़ा।

३ बाँसुरी। ४ एक प्रकार का बाजा।

५ एक प्रकार का साधारण हिन्दुस्तानी ढंग का होटल।

६ मालकिन।

कुछ यों ही

उन्हें 'टन' से मतलब, हमे 'मन' से मतलब,
उन्हें लाख से है, हमें 'वन' से मतलब।
उन्हें हर तरह है सुडेटन से मतलब,
हमे है मुहल्ला भुलेटन से मतलब॥

× × ×

हमें है किसी भी न नेशन से मतलब,
न जेको से मतलब, न जर्मन से मतलब।
हमें हैं नहीं फेडरेशन से मतलब।
फकत हमको अपने नशेमन से मतलब॥

× × ×

है ज्यो शायरी के लिये 'पन' जरूरी।
पितरपख मे जैसे हैं बाभन जरूरी।

ज्यों उपवास के बाद पारन जरूरी।
उन्हें हो गया है सुडेटन जरूरी॥
घड़ी की है आवाज 'टन' 'टन' जरूरी,
पकौड़ी बनाने को बेसन जरूरी।
है पहिली को टीचर को वेतन जरूरी।
है पहिली को उनको 'सुडेटन' जरूरी॥

खरी-खोटी

आप तो मुझसे नहीं पहले मिले !
अब मिले, इतनी 'डिले'[1] करके मिले ॥
किस तरह मैं पोस्ट[2] दूँ, बतलाइये,
जब कि मुझको मुफ्त मे बी० ए० मिले ।
छिपके हैं मेरी बुराई कर रहे,
दोस्त मुझको इस कदर गन्दे मिले ।
दूसरों का देख दुख जो हो दुखी
वे कहाँ अल्लाह के बन्दे मिले ।

नोट :—१ देरी । २--नौकरी ।

क्यों कोई मैट्रिक[1] को रक्खे क्लर्क[2] अब,
जब कि दस रुपये में ही एम० ए० मिले।
कैसे हो आजाद यह हिन्दोस्ताँ,
लीडराँनाने[3] वतन ठण्डे मिले।
मुस्लिमों को जो उधर जिन्ना मिले,
हिन्दुओं को हैं इधर मुन्ने मिले!
खोजता उनको शहर भरमें रहा,
घर जो लौटा, सामने घर के मिले।

नोट :—१ अंग्रेजी के हाई स्कूल की अन्तिम परीक्षा पास करने वाला। २—किरानी। ३—नेतागण।

रे !

क्यो तूॅ उदरदरी में इतने ठूँस रहा है पूए !
क्यों सब रबड़ी और मलाई चाट गया रे मूए !
हम सब देख डरे !
माल मिला है तुझे पराया,
इससे तूने किया सफाया !
तीन पचीस खा गया पूरी,
पर चेहरे पर शिकन न लाया !
यह कैसा ढब रे !

कोटि कोटि कीटाणु उड़ रहे,
आह पवन के अटल पटल पर !
और मक्षिका-दल के हमले,
हुए हजारों तव पत्तल पर !!
ओ जाहिल जबरे !

कुटिल ! कॉलेरा-प्रूफ सरीखा,
तू बैठा है मार पालथी !
क्या यह पूर्व जन्म मे तेरी,
उदर-दरी चौपाल-पाल थी !

अब तो कुछ थक रे।
आँखें निकल सी रहीं तेरी,
स्वेद-धार से नहा रहा है।
तोंद फटेगी अब यह तेरी,
ले डकार तू महा रहा है।
ओ बलि के बकरे!

अनुभव !

जब कविसम्मेलन मे डॅट कर,
सब कवियो को जलपान मिला।
तब जा करके पण्डाल बीच,
चिल्लाने का अरमान मिला।
उठता है सोकर आठ बजे,
सोता है साढ़े पॉच बजे॥
यह कुम्भकर्ण का नाना है, नौकर मुझको शैतान मिला।
थूकता रहा घर भर में मैं,
हो लाल उठा कमरा सारा।
सिरहाने ही रक्खा था पर,
मुझको न कहीं पिकदान मिला।
उनकी लम्बी मूॅछे आकर,
दाढ़ी से यो है मिली हुईं।
मानों अब चीनी सरहद से,
आ करके है जापान मिला॥

———

विरह का गीत

तुम्हारी याद मे खुद को बिसारे बैठे हैं।
तुम्हारी मेज पर टँगरी पसारे बैठे हैं।
गया था शाम को मिलने मैं पार्क मे मिस से,
वहाँ पे देखा कि वालिद हमारे बैठे हैं!!
जरा सा रूप का दर्शन तो दे दो आँखों को,
बहुत दिनो से ये भूखे बेचारे बैठे हैं।
ये काले बाल औ इनमें गुँथे हुए मोती,
ये राजहँस क्या जमुना किनारे बैठे हैं?
गया जो रात बिता घर तो बोल उठे अब्बा,
इधर तो आओ हम जूते उतारे बैठे हैं?

— —

रहस्यवाद !

अरे ओ इक्के वाले !
कहाँ घुसा आ रहा भवन में चल अनन्त की ओर !
उस निसर्ग के निभृत कोण में,
होता है प्रध्वनित निरन्तर !
कल कल छल छल पल पल थल थल !!
गुञ्जित कर दे मौन स्वर मे
खड़ खड़ खड़ खड़, टिक टिक टिक टिक !!
मेरी टूटी फूटी हारमोनियम के मधुर कर्कश स्वर से
कर दे तू अपनी हृत्तन्त्री के स्वर का सुन्दर समवाय !!
अरे ओ इक्के वाले !
झिलमिल झिलमिल प्राची का पट
मौन साधना का आवेदन
थिरक रहे सूने कुटीर में आकर क्यो अविराम !
अरे मधुर उच्छ्वास मनोहर, सुना मौन सगीत !
अरे ओ इक्के वाले !!

———

अपूर्व ध्यान

शोभित कर सिगरेट लिये।
मुच्छ-विहीन वदन पर पाउडर-लेपन ललित किये!
करमें 'केन'[१], पॉव मे 'डासन'[२], सर पर हैट दिये।
बोलत बैन बराबर गिटपिट, ब्राण्डी कुण्ड पिये!
गुरुजन को नित डॉट बतावत, "बस अब चुप रहिये"!
निशि दिन इष्टदेव 'फैशन'-पूजन, इनके जरिये!
चरमा से है नाक मनोहर अति सुन्दर लखिये।
मनो दुचश्मी हे (ھ) के नीचे शोभित बड़ी ये (ے).

नोट :—१ छड़ी। २—चर्मर ध्वनिवाला जूता।

नोंक झोंक

इन मेरे कपटी मित्रों का,
व्यवहार न जाने क्या होगा !
यही रहा तो कुछ दिन में,
ससार न जाने क्या होगा ?
मानते न हैं सम्पादक जी, सब लेख बटोरे जाते हैं ।
सड़ियल रद्दी कूड़ा करकट कतवार न जाने क्या होगा ॥
चिकना जिसका हो कवर नहीं,
हो चित्र न सिनेमा स्टारो के ।
मोटा खद्दर के चद्दर सा,
अखबार न जाने क्या होगा ।

परसाल मुझे होली पर थे,
जूते भेजे साली जी ने।
इस साल इलाही अब उनका,
उपहार न जाने क्या होगा!
देते हैं रुपया एक नहीं, हैं कभी छनाते भंग नहीं
फिर तुम्हीं बताओ अब जाकर ससुराल न जाने क्या होगा!
किससे क्या कहें कौन समझे,
अब सुनकर भी अनसुनी करें।
छायावादी कविताओं का
भण्डार न जाने क्या होगा?

× × ×

रक्षण निमित्त रुपये लेकर
भक्षण करते हैं शर्म नहीं।
ऐसे हैं जहाँ सिपाही ही, सरदार न जाने क्या होगा।
वर्धा का चर्चा लगा है अब
चरने शिक्षा का क्षेत्र सभी
उपकार अगर यह मान लिया।
अपकार न जाने क्या होगा?

इस बार यहाँ बादाम मिर्च

विजया हँड़िया औ सिलवट्टा,

लेकर चलना है ठीक इन्हें,

उस पार न जाने क्या होगा?

धँसते हुए मकान-मालिक के प्रति

धँस कर जमीन अन्दर सहाय
टिन के ऊपर वन्दर सहाय
बाहर सहाय अन्दर सहाय
शावास कृष्ण चन्दर सहाय
क्या खूब मकान बनाया है
घर भर को टिन से छाया है
ईंटों का फर्श बिछाया है
मुंशी जी की यह माया है
बूँदे जब पड़ती हैं पड़ पड़
टिन करती है तड़ तड तड़ तड
दरवाजे करते हैं भड़ भड़
बीबी जी करती हैं बड बड़
टिप्पी कारी धुल जाती है
चींटों की सेना आती है

मेरी तबियत घबड़ाती है
दृढ़-तर छाती थर्राती है
करता हूँ केवल हाय हाय
शाबास कृष्ण चन्दर सहाय
दीवाली से पानी चूता
मेरा थक जाता बस बूता
दरवाजे करते हैं चर मर
जैसे चर मर करता जूता
घर नहीं दूसरा मिल पाता
क्या करूँ चित्त है घबड़ाता
क्या लेख लिखूँ कैसा नाटक
इस घर से ही हूँ छक जाता
कोई न सूझता है उपाय
शाबास कृष्ण चन्दर सहाय

पेट–पूजा

जब रहता है भरा, विश्व दीखता है हरा,
नीरस भी सरस दिखाता अभिराम है।
जब रहता है रिक्त, हरा भी दिखाता शुष्क,
सुन्दर भी अमित असुन्दर निकाम है।
तुझसे ही प्रकट चराचर हुआ है प्रिय,
तेरे ही निमित्त यह सारा काम धाम है।
उदर! उदार! यार! जय जयकार तेरी,
ए रे पेट! लेट लेट तुझको प्रणाम है।

❀ ❀ ❀

आँखें रिकमेण्ड करती हैं जिस भोजन को,
करते स्वीकार उसे, बड़े शीलवान हो।
जीभ-अर्दली की रोक टोक है किसी को नहीं,
देते निज गेह मे सभी को सदा स्थान हो।
भस्म कर डालते हो क्रोध से समस्त अन्न,
फिर भी न होते शान्त ऐसे तेजवान हो।
सूक्ष्म रूप पेट, त्यों विराट रूप तोंद तुम्हीं,
नाना नाम गोत्र बड़े महिमानिधान हो।

❀ ❀ ❀

पेट जिसका हो बड़ा 'पेटू' कहते है उसे,
बड़े मुख वाले को तो 'मुक्खू' नहीं कहते।
अच्छे कान वाले को न 'कानू' कहता है कोई,
लम्बी नाक वाले नाम 'नक्कू' है न लहते।
पेट की प्रसन्नता से होते है प्रसन्न सब,
पेट की है ज्वाला से समस्त जीव दहते।
रख कर पेट मे अपार अन्न राशि, फिर
विश्व में पधारने को 'पेट' से ही रहते।

❀ ❀ ❀

जीवन से लेकर मरण तक धन्धा यही,
फिर भी न पेट को प्रसन्न कर पाते हैं।
बरहँ हो या कि तेरही हो, लोग बैठ बैठ,
पेट की प्रधानता के नित्य गीत गाते है।
पेट जी हैं नेता ये ही रखते प्रबन्ध ठीक,
ये ही अव्यवस्था और गदर मचाते हैं।
कविता करैया कवि बिना पेट पूजा किये,
षटरस बिना नवो रस सूख जाते है।

———

'कविजी की पत्नी'

"अनन्य अभिलाषा"

चिन्ता न हो देश की अपने, मातृभूमि को भूलूँ।
सदा खुशामद से औरो की, मन में अपने फूलूँ।
मधुर चापलूसी सुमन्त्र को जपूँ, चढ़ाऊँ डाली।
दावत के ही हेतु करूँ मैं, सभी खजाना खाली॥
त्यो गौरांग महाप्रभुओ को, सादर शीश नवाऊँ।
खिदमत करूँ अफसरो की मैं, 'सर' की पदवी पाऊँ॥

पुरस्कार का लालच देकर, सबसे लेख लिखाऊँ।
सब असत्य सम्वाद प्रकाशित कर प्रवीण कहलाऊँ।
काट काटकर कटिंग बटोरूँ, उन्हें पत्र मे छापूँ।
निन्दा करूँ विरोधी गण की, उनकी गरदन नापूँ॥
कभी रसातल कभी स्वर्ग, जिसको चाहे पहुँचाऊँ।

किसी पत्र का बस प्रधान मै सम्पादक बन जाऊँ॥
अण्टसण्ट शब्दो को ठूसूँ, दिखलाऊँ हथकण्डे।
करूँ शिफारिश, करै प्रशंसा सब साहित्यिक पण्डे॥
अलंकार को दूर भगाऊँ, मात्रा-गण को चाटूँ।
ध्वनि का ध्वंस करूँ क्षणभर मे, गला काव्य का काटूँ॥

रबड़ छन्द में पद्य लिखूँ, पूरा अन्धेर मचाऊँ।
सम्मेलन मे करूँ प्रेसाइड, 'कवि सम्राट्' कहाऊँ।

सुन्दर श्वेत वसन कर धारण; लम्बी पगड़ी बाँधूँ।
कपट और छल के बल, केवल अपना मतलब साधूँ॥
ईटों पत्थर कूट पीस कर, उसे महौषध कर दूँ।
लेकर गहरी फीस रोगियों से जेबों को भर दूँ॥
यम को मैं निश्चिन्त करूँ, बस नित्य मरीज फसाऊँ।
नाड़ी-ज्ञान-विहीन रहूँ, पर वैद्यराज कहलाऊँ॥

ताँगे मोटर रक्खूँ अपने, उनपर करूँ सवारी।
जिन्हें देखकर लोग कहें 'यह तो डाक्टर हैं भारी'॥
जहाँ चरण मेरे पड़ जावें, यम के दूत पधारें।
रोग नहीं पर रोगी को ही मेरे 'मिक्श्चर'[1] मारें॥
थर्मामीटर[2] स्टेथिस्कोप[3] को पॉकेट में लटकाऊँ।
सभी मर्ज मे इञ्जेक्शन[4] दूँ, एल० एम० एस०[5] कहलाऊँ॥

---

१ दवा (कई दवाओं का मेल) २ ज्वर नापने का यन्त्र ३ फेफड़ों की हालत जानने का यन्त्र ४ सुई लगाना ५ डाक्टरों की एक पदवी।

घर में बसन विदेशी पहिनूँ, बाहर पहिनूँ खद्दर।
घर में वस्त्र रेशमी ओढ़ूँ, बाहर ओढ़ूँ चद्दर॥
सभा-भवन में परस्त्रियों को "माता" "बहिन" पुकारूँ।
घर के अन्दर निज भावज से मैं व्यभिचार विचारूँ॥
भीतर भरे भाव हों भीषण, पर 'श्रद्धेय' कहाऊँ।
प्रभो! प्रार्थना यही आपसे मैं 'नेता' बन जाऊँ॥

मन में सदा द्वेष ईर्ष्या हो, दुर्विचार हो व्यापक!
आती नहीं शुद्ध हो भाषा, बनूँ उच्च अध्यापक!!
नित्य अबोध शिष्यगण पर भी, बुरी दृष्टि मैं डालूँ।
चाहे जिसे 'फेल' कर दूँ, यों सारी कसर निकालूँ!!
समझूँ 'मैं ही बादशाह हूँ', ऐंठ भरा इठलाऊँ।
दृष्टि शनीचर सी हो मेरी, मैं 'टीचर' कहलाऊँ॥

निन्दा करूँ सभी सत्कवियों की बरबस बेखटके।
ईर्ष्या द्वेष प्रपञ्च मन्त्र को जपूँ, लड़ूँ त्यों डटके॥
कलम थामने मुझे नहीं चाहे आवे लोहे की।
नहीं बता सकता भी होऊँ, परिभाषा दोहे की॥
फिर भी औरों के बल पर मैं, व्यर्थ विवाद बढ़ाऊँ।
प्रभो! प्रार्थना यही आपसे, आलोचक बन जाऊँ॥

'ओल्ड फूल्स'[१] हैं 'फादर और मदर क्यों' इनको मानूँ।
भाई बन्धु गॅवार अज्ञ हैं, क्यों इनको पहिचानूँ॥
पत्नी मेरी पतिव्रता है, यद्यपि सुन्दर तन की।
'मिस' के आगे कभी न हो सकती है मेरे मन की॥
बी० ए० पास मिले बस बीवी, मैं 'एम० ए०' हो जाऊँ।
घूमूँ सग, सिनेमा देखूँ, पूरा सभ्य कहाऊँ॥

इक्केवान के प्रति !

ले चल मुझे बुलानाले तू, इक्केवाले धीरे धीरे!
तीन बजे कालेज से धाये, अभी सानही तो बज पाये!
डेढ़ मील हम हैं चल आये, चल मतवाले धीरे धीरे!!
धीरे चलना नीति नहीं क्या? चल धीरे कुछ भीति नहीं क्या?
घोड़े से है प्रीति नहीं क्या? गास उठाले धीरे धीरे!!
जितना यह घोड़ा चलता है, उतना ही कोड़ा चलता है!
कह, क्या यह थोड़ा चलता है? रे मुस्ताले धीरे धीरे!!
करता क्यों भीषण प्रहार है? यह कैसा तेरा दुलार है?
इक्का ही तेरा उलार है, यह बनवा ले धीरे धीरे!!
यह घोटा है मौन मनस्वी, अस्थि चर्म-अवशिष्ट तपस्वी,
तू सारथी अपार यशस्वी, यह सुत्र पाले धीरे धीरे!!

---

१ पुराना [illegible]

कहीं दौड़ता तीव्र पवन सा, कहीं शान्त नीरव निर्जन सा
जीवन के उत्थान पतन सा, दृश्य दिखाले धीरे धीरे !!
अरे देख, घोड़ा यह भागा, रे! सम्हाल, है बड़ा अभागा!
कुछ विचार ले पीछा आगा, और सताले धीरे धीरे !!
अभी कहाँ था इतना धीमा, अब सत्वरता हुई असीमा,
अरे! कराले अपना बीमा, जान बचा ले धीरे धीरे !
अभी दूर मेरा मकान है, अन्धकार-आवृत जहान है।
होता अब तेरा 'चलान' है, लैम्प जला ले धीरे धीरे !!
यह घोड़ा स्वछन्द सरीखा, मनमौजी मतिमन्द सरीखा,
छायावादी छन्द सरीखा, इसे मनाले धीरे धीरे !!
ले चल मुझे बुलानाले तू, इक्केवाले धीरे धीरे !!

दोहावली

मेरी सब बाधा हरै, सुखदायिनि सरकार।
जाकी कृपा अपार ते, डिपटी होत चमार॥
आखर एक न जानहीं, सड़क बटोरन जायँ।
सोउ तेरे परसाद ते, एम० यल० सी० कहलायँ।
लण्ठ जण्ट बहु ह्वै गये, मैजिस्ट्रेट चमार।
पाइ क्रोध बैठे रहैं, बहु बी० ए० बकार॥
'सर' होते तेरी कृपा पाकर भंगी डोम।
बसै सुखद सरकार यह, नित हमरे हिय-होम॥
चाहौ जो सुख शान्ति को, एहि जगती में आय।
रटहु याहि दोहावली, और न आन उपाय॥
निन्दा किये बड़ेन की, नाम बहुत बढ़ि जाय।
शौकत अली बली भये, गाँधी को गरियाय॥
वृद्ध भये तो क्या भया, करहु ब्याह सों प्रेम।
पचपन बरस बिताय के, मोकल बियहे मेम॥
दान कबहुं नहिं दीजिये, यामें कष्ट महान!
बलि मीता हरिचन्द को, है प्रत्यक्ष प्रमान॥

या दुनियाँ मे आइकै, सबकौ द्रव्य समेट।
कर ले निन्दा सुजन की, भर ले अपना पेट !!

नाम चाहौ साहित्य में, आलोचक बन जाव।
गुण की चर्चा मत करौ, सबकौ दोष दिखाव ।।

युग विज्ञापन कौ अहै, भे सब नोटिसबाज।
कलम न थाम्हन आवही, सोउ भये कविराज ।।

ग्रन्थ लिखाकर अन्य सों, अपने नाम छपाय।
हिन्दी के सेवक बनत, डूब न मरत लजाय ।।

सबही लेखक ह्वै रहे, सबको लगी छपास।
सब ही है करने लगे, अब साहित्य-विकास ।।

जो पै कवि बनना चहौ, पढ़ि पुस्तक दुइ चार।
लगौ बजावन बैठि तुम, "हृत्तन्त्री के तार"।

कुण्डलियाँ

साईं ये न विरुद्धिये, सम्पादक, अखबार।
कम्पोजीटर प्रेस के, प्रूफ विलोकन हार॥
प्रूफ विलोकन हार, प्रकाशक औ विक्रेता।
मेम्बर, वोटर, चेयरमैन, नाऊ औ नेता!
कह गिरधर कविराय, भलै छोड़ै कविताई।
इन ग्यारह सौं बचै, विरुद्धै इन्हें न साईं॥
सम्पादक होई कीजिये सपनेहुँ नहि अभिमान।
चञ्चल जल दिन चारिको ठाँउ न रहत निदान।
ठाँउ न रहत निदान, छापि कविता यश लीजै।
'प्रोपोगैंडा' दिखलाय, विनय सबही की कीजै।
कह गिरधर कविराय, लेख लिखिये नहि मादक।
मैनेजर खुश किये, आप रहिहैं सम्पादक॥

आत्म-विज्ञापन !

मैं सीमा का विस्तार किया करता हूँ।
मै जनता का उपकार किया करता हूँ।
मैं कविता का व्यापार किया करता हूँ।
मैं हिन्दी का उद्धार किया करता हूँ॥

❀ ❀ ❀

मैं इधर उधर व्याख्यान दिया करता हूँ।
मैं कवियों को वरदान दिया करता हूँ।
मैं सम्पादक हूँ दिव्य अनोखा पावन,
लेखों को मैं सम्मान दिया करता हूँ।

❀ ❀ ❀

कविता पढने को मार किया करता हूँ।
कवि-सम्मेलन को प्यार किया करता हूँ।
कविताएँ अपनी भेज एडीटर गण को,
मै सब गन्दा अखबार किया करता हूँ।

❀ ❀ ❀

दिनभर स्वदेश का ध्यान किया करता हूँ।
'जागृति' 'उन्नति' 'उत्थान' किया करता हूँ।
पर निशा अवतरण के पीछे चुपके से।
मैं मदिरालय से पान किया करता हूँ।

❀ ❀

मैं जग-जीवन का भार लिये फिरता हूँ।
मैं यह पागल व्यापार लिये फिरता हूँ!
अपने कुर्ते के जेबो के ही अन्दर।
मैं गद्य-पद्य-संसार लिये फिरता हूँ!

❀ ❀ ❀

मै कवियो का सरदार बना फिरता हूँ।
ग्रन्थों का बस परिवार बना फिरता हूँ।
मैं अण्टसण्ट मनमाना लिख लिख कर ही,
अलबेला टीकाकार बना फिरता हूँ!

❀ ❀ ❀

मैं मधुशाला-रोजगार लिये फिरता हूँ।
मै प्यालो का कतवार लिये फिरता हूँ।
मैं अपनी आहो के पीछे चिरवादित,
टूटा हृत्तन्त्री-तार लिये फिरता हूँ॥

स्तुति

हे सहेली !

बहुत उत्सुक हो रहा हूँ, देखता तुमको निरन्तर।

तव निरीक्षण कर रहा हूँ, आँख पर चश्मा लगाकर ॥

समझना तुमको कठिन, तुम हो रहीं 'अनसीन पेपर'।

बूझ कैसे मैं सकूँ तुमको, न हूँ मैं किंग अकबर।

बीरबल की हे पहेली !

जब कि अबलाएँ सभी भेड़ी सदृश एकत्र होकर।

पहिन जूती उच्च एड़ी की मचाती चारु चरमर ॥

चल पड़ीं सिनेमा भवन को, कर वदन मञ्जुल मृदुलतर।

उस समय तुम इस विजन में भर रहीं आहें निरन्तर।

लेटकर बिल्कुल अकेली !

इस तुम्हारे दृग युगल मे विश्व की हिस्ट्री[१] भरी है।
मञ्जुता की, माधुरी की, मोह की मिस्ट्री[२] भरी है॥
जो हृदय मे है उसी की टिप्पणी इनमें धरी है।
विज्ञ जन के हेतु सब सम्वाद की सूची खरी है॥
ये नये अखबार डेली !

व्यथा

करूँ मै अब कैसे अभिसार!
मेढक-वृन्द स्व टर्र टर्र से करता है चीत्कार!
कवि सम्मेलन मे गाते हो कवि ज्यो राग मलार!

टार्च बैटरी-हीन हो गया,
अन्धकार है पोन हो गया,
एक अजब है सीन हो गया,
सोऊँ पाँव पसार!

जल की धारा डॅटी हुई है,
कीच सडक से सटी हुई है,
बरसाती भी फटी हुई है,

भीगूँगी लाचार !!

निकट तुम्हारा स्थान नहीं है,

उर में अब अरमान नहीं है,

पनडब्बा मे पान नहीं है,

बहुत दूर बाजार !

करूँ मैं अब कैसे अभिसार !!

उनकी बातें

मुझसे कुछ और उनसे कुछ कहते,
यों उल्टी सीधी चले हैं समझाने ।
न अब तक आपकी बात हम समझे,
आपकी बात आपही जाने ।

❀ ❀ ❀

खूबियाँ कितनी ज़माने की कहें,
अब है रसगुल्ला बताशा हो गया ।
शायरी खिलवाड है अब हो गयी,
अब है शायर भी तमाशा हो गया !!

❀ ❀ ❀

चीखने का आ गया होता जो ढब,
बैठकर किस्मत को यों नहीं रोते ।

पहन खद्दर हाथ मे झोला उठा,
हम भी लीडर आज वन गये होते ॥

❀ ❀ ❀

हाथ जोरो से हिलाया कीजिए,
आँख से आँसू वहाया कीजिये !
मेज को घूँसे लगाया कीजिए !
इस तरह लीडर कहाया कीजिए ॥

❀ ❀ ❀

शहनाई।

गुन गुन गूँज रही शहनाई।
उरई कवि सम्मेलन मे हैं जुटे सुकवि समुदाई।
सभी काम तज आये सज धज देखन लोग लुगाई॥
लड़के दौड़े आये सुनकर, अपनी छोड़ पढ़ाई।
पूरे दस घण्टे तक दिन भर मची रही कविताई॥
नर नारी सब लेन लगे थे मुँह बाकर जमुहाई।
एक सुकवि ने बड़े जोर से कविता निजी सुनाई॥
चीख पड़ा बालक कोठे पर आने लगी रुलाई।
मानो देखा हो नयनो से सुरपनखा की माई॥
कवि कवि के मुख ऊपर छाई रञ्जित पान ललाई।
दर्शक दर्शक ने सुलगाई निज सिगरेट सलाई।
कहैं कबीर सुनो बेटा साधो, ये दोऊ पाँचे भाई।
कविता लता पल्लवित रक्खे रहैं सुखी सुखदाई॥

उलहना

मेरे मानस की तुम सुलझी,
बातें उलझाते कहाँ चले ?
धुप्पलबाजी से तुम अब यों,
चप्पल चटकाते कहाँ चले !
मुँह में पानों को ठूँस ठूँस,
यों पीक चुवाते कहाँ चले !
दिल को ही चुराते थे अब तक,
फाउण्टेन को चुराते कहाँ चले !

हे महानिशा के अन्धकार !

हे महानिशा के अन्धकार !
तेरा कैसा सुखमय प्रसार !!
बाबू साहब खाना खाकर,
सो गये नौ बजे ही उदास।
बीबी साहिबा सिनेमा में,
देखने गयी हैं देवदास।
सखियो के संग यहाँ बैठीं,
ऐंठी स्वरूप अभिमान लिए।
मुँह के अन्दर हैं पान लिए,
मुँह के बाहर मुस्कान लिए।
ये कालेज के लड़के देखो,

घूरते उन्हें हैं वार बार!
हे महानिशा के अन्धकार!!

❀ ❀ ❀

तेरे अन्दर खद्दरधारी,
ये विकट राष्ट्र के कर्मवीर!
नेता महान् भारत भू के
लेक्चरबाजी के गुरु गंभीर!
बारह बजते ही निकल पड़े!
घर से पुलकित होकर महान।
सिर पर रेशम की टोपी धर,
मखमल के पहिने पदत्रान!!
कलुआ सा वदन छिपा करके,
भागे जाते मछुवा बजार!
हे महानिशा के अन्धकार!!

❀ ❀ ❀

प्रातः घाटों पर जो बैठे!
चन्दन घिसते थे धुवाधार।
होटल में वे पण्डा जी अब,
हैं उड़ा रहे अण्डे अपार!
मादक निवारिणी परिषद् के
मन्त्री जी मनमें भरे मौज।

पीकर ह्विस्की बिल पे[1] करने—
मे करते हैं गाली गलौज।
आखिर उनको गिरवी रखनी,
पड़ गयी पुरानी फोर्डकार!
हे महानिशा के अन्धकार!!

❀ ❀ ❀

दिन भर श्रमिको कृषिको का था,
चल रहा ठाट से कारबार!
घर मे, खेतो गलियो मे अब,
वे सब सोये टॉगें पसार।
पर लक्ष्मीवाहन जाग रहे,
हैं निकल पड़े तजकर आश्रम!
है कहीं गटरगट की बहार,
है कहीं गूँज उठती छम छम!!
है कहीं हवन के कुण्ड सदृश।
जब रहे हवाना के सिगार!!
हे महानिशा के अन्धकार!

❀ ❀ ❀

नोट—चुकता करना।

गोरखपुर के मच्छर

मैंने कहा "कृतार्थ हुआ मैं,
अब जावें इस थल से।
पर वे हटे न एक इञ्च भी
डॅटे रहे निश्चल से॥

बोले वे—"सम्मेलन है यह
क्या है चतुर न पक्के?"
आये होंगे कवि बन बनकर
कितने चोर उचक्के।"

सोवेंगे जो आप, तुरत
गुम होगा कपड़ा लत्ता।
कहिये तो हम रहें जागते
स्वयं जाग अलबत्ता॥

कपड़े लत्ते यहाँ गँवा
कर अपनी यों पामाली।
घर जाने पर क्या न खूब ही
तड़पेगी घर वाली।"

बोला मैं—"बस चुप रहिये,
मैं हूँ न लण्ठ सौदाई।
हटिये," पर न हटे वे, तब मैं
सोया तान रजाई॥

जहाँ रजाई हटती थी, वे
गा उठते थे गायन
"भनभन भनभन गुनगुन गुनगुन
गुनगुन गुनगुन भनभनभन।

हुआ सवेरा आह! अर्ध–
निद्रा से जब मैं जागा।
पाया नहीं उन्हें, क्या जाने
कहाँ मुएह वह भागा॥

दुखी हुआ उनके वियोग से
या विलोक निज द्वारा।
सुखी हुआ या, करे फैसला
स्वागत-समिति-अदालत।

प्रिय-वियोग में प्रेमी उनके
रहते मुख मुरझाये।
पर था मेरा मुख मुद फूला,
मैं था नहीं फुलाये॥

जब आया पण्डाल बीच
जाने का अवसर सुन्दर
देखा, वे सब छिपे हुए हैं,
सब टोपी के अन्दर"

"अहा आप हैं, आवें आवें
कृपया निकट पधारें।
कुछ विचार ही विनिमय ही होवे
कुछ तो प्रेम पसारें॥"

पर वे सटक गये, वे हिचके
मुझे प्यार देने में।
ज्यों सम्पादक लेख छापकर
पुरस्कार देने में॥

कुछ भी हो, उनके कारण थी,
कमरे मे यों हलचल।
ज्यों छायावादी कविता में
"कल कल पल पल छल छल"॥

कुछ पापिष्ठ उन्हें कहते हैं
'पाजी, रोग-प्रचारक'!
बुद्धिहीन डाक्टर बतलाते
उन्हें मनुज-संहारक॥

पर अब मैं जो कुछ कहता हूँ,
यदि उसको सुन लोगे।
फिर न किसी को यों ही तुम सब.
दोष अकारण दोगे॥

'जब तक हैं रवि, सोम, भौग, बुध
गुरु, भृगु और सनीचर।
जब तक हैं इस अखिल विश्व में,
सुर, नर, नाग, निशाचर॥

जब जब विद्या मण्डित पण्डित,
जब तक निपट निरच्छर।
अजर रहें ये, अमर रहें ये
गोरखपुर के मच्छर॥"

प्रेम पवाड़ा

खटमल आइ बसौ खटियन मे।

मच्छर मामा की 'मेजॉरिटी'[1] है कवि सम्मेलन मे।

तब 'माइनारिटी'[2] देख देखकर होती चिन्ता मन मे।

मच्छर आये, तुम न दिखाये, कहाँ छिपे तकियन मे।

क्या 'गोरिल्ला वार'[3] करोगे, नहीं वीरता तन में।

तुम 'एकान्त-प्रेम' के प्यासे, प्रेम न विज्ञापन मे।

जैसी है 'पॉलिसी[4] तुम्हारी, वैसी क्या नेतन मे।

नोट—१—अधिकता। २—न्यूनता। ३—लुकछिपकर शत्रु पर आक्रमण करना। ४—नीति।

या हिटलर में या मुसोलिनी, या मिस्टर साइमन में?
या जिन्ना में, या मुंजे में या स्पीकर[1] टण्डन में?
जैसा मधुरगान कवितामय है तेरे आनन में।
वैसा क्या मतिराम, देव, दूलह, मैथिली सरन में?
तुमसा प्रेम प्रकट हो जावे, यदि पूरे नेशन[2] में।
तो फिर कौन फँसा रह सकता है यों फेडरेशन[3] में!
अहो अहिंसा-व्रती, सत्य प्रिय, देशरत्न घातन में।
कभी उग्र तुम, कभी क्षुद्र तुम, कभी शान्त शासन में।
त्वचा चेतना युक्त बनाकर, छिप जाते तुम छन में।
जैसे आंख मिचौनी खेलें बालवृन्द बचपन में॥
सच बतलाना सखे! तुम्हें है सुख उतना ही मन में?
कौंसिल में कांग्रेसी को जितना 'हिन्दी भाषन' में।
या जितना छायावादी को मिलता पागलपन में।
उतना ही सुख तुम पाते हो, इस अपने साधन में।

* * *

क्रूर मनुज पशुबल में रत हैं यों तव निर्वासन में।
पर मैं तव अनुरक्त भक्त हूँ, रत तव आराधन में।

नोट—१—वक्ता २—जाति ३—संघ शासन।

तुम सर्वव्यापक महान् हो, इस अपने लघु तन मे।
कभी मेज पर, कभी सेज पर, कभी कोट अचकन में।
कभी टाट पर, कभी खाट पर, कभी हैट जूतन मे।
तव डर डरे त्रिदेव जगत्पति, शयन करै न भवन मे।

हरि समुद्र में, शिव पर्वत मे, ब्रह्मा कमलासन मे।
तुम प्रसक्त होते यो तन मे, ज्यो गाँधी हरिजन मे।
या जैसे बीबियाँ आजकल की इँगलिश फैशन मे।
जैसा है अनुभव तुममे प्रिय, वैसा क्या वृद्धन मे?

जैसी है स्वतन्त्रता तुममे, वैसी क्या युवकन में?
जैसी चपल कला है तुममे वैसी क्या बच्चन मे?
तव प्रभाव करता कोलाहल है अपार त्रिभुवन मे।
कितने ऊष्ण नीर की धारा बही खाट सिञ्चन में।

लाठी चार्ज हुआ खटियो पर धरी गयीं निर्जन मे।
आह, घाम मे धर प्रतप्त की गयीं सूर्य्य-किरनन मे।
फिर भी हे खटियन के प्रेमी! बसे रहे खटियन मे॥
निज स्वदेश, निज जन्मभूमि 'खटिया' के अनुरंजन में।

लगे रहे तुम वीरव्रती से, डिगे न पल भर मन मे।
जैसा जन्मभूमि के प्रति है प्रेम भरा नव तन में।
वैसा क्या रूसी, चीनी, जापानी या जर्मन मे?
या नेपोलियन मे, लेनिन मे, किचनर मे, नेल्सन मे?

डटे रहो मेरे बिस्तर मे, जैसे चीनी रन में।
सटे रहो मेरी तकिया मे, यथा रेल इञ्जन मे।
फँसे रहो चादर मे, ज्यों 'लीडर' चन्दा-चिन्तन मे।
बसे रहो खटियो के वासी, बसे रहो खटियन में॥

खटमल आइ बसो खटियन मे।

———

कसिया की सड़क

कल गये सभी कवि कुशीनगर,

हो विवश, भरे 'बस'[1] के अन्दर।

बस मे थे कवि यों अपार,

मानो मेटिया मे हो अचार।

कितने लटके थे अड़क अड़क।

कसिया की सड़क, कसिया[2] की सड़क ॥१॥

सकरी थी सड़क, विशाल कहीं,

था ऊँचा नीचा खाल कहीं।

नोट —१—वह मोटर जिसमें १५-२० मनुष्यों के बैठने का स्थान हो। २—गोरखपुर जिले का एक कस्बा।

'ग्रे' आफ और 'बंगाल' कहीं,
आकाश कहीं. पाताल कहीं।
'बस' जाती थी भड़क भड़क।
कसिया की सड़क, कसिया की सड़क ॥२॥

तनिक तनिक दूरी पर बस थी,
जल भरवाती स्यानी।
जैसे बहुत सुकविगण कविता-
पढ़ते पी पी पानी।
हम देख रहे थे धड़क धड़क।
कसिया की सड़क, कसिया की सड़क ॥३॥

यद्यपि मन्दा लता सा ड्राइवर,
लॉरी थी गिरती उछल उछल।
घर्रे के अन्दर से भी ज्यों,
आगे लग जाती मचल मचल।
दोनों ध्वनि बस खड़क खड़क।
कसिया की सड़क कसिया की सड़क ॥४॥

इस सब तो फिर [illegible],
[illegible] भी थी मनभावन।
[illegible],
आनन्द और [illegible] ॥

वे कहते थे, कुछ फड़क फड़क।
कसिया की सड़क, कसिया की सड़क ॥४॥

घटी एक घटना पर, जो थी
अति विस्मय-उत्पादक।
फँसी एक लारी थे जिसमे
"सरस्वती" - सम्पादक॥
वे कहते थे तब तड़क तड़क।
"कसिया की सड़क, कसिया की सड़क"॥

कितने ही थे उसमे कविगण,
कितने ही थे उससे वकील।
कुछ हँसते, कुछ रोते मन मे,
चल पैदल आये तीन मील॥
सब बोल रहे थे, कडक कडक-
"कसिया की सडक, कसिया की सडक"॥

नैराश्य गीत

कार लेकर क्या करूँगा ?

तंग उनकी है गली वह, साइकिल भी जा न पाती।
फिर भला मैं 'कार' को बेकार लेकर क्या करूँगा ?
आपने जो लेख भेजा, मैं उसे लौटा रहा हूँ।
मानियेगा मत बुरा, कतवार लेकर क्या करूँगा ?
जब मुझे तज श्रीमतीजी, आज हैं नैहर पधारीं।
बाप माँ भाई बहिन, परिवार लेकर क्या करूँगा ?
छप सकी मेरी अभी तक एक भी कविता न जिसमें,
मैं भला ऐसा सड़ा अखबार लेकर क्या करूँगा ?
मैं जनाना हूँ नहीं, दो ऊँट के मुँह में न जीरा.
ये सड़े लड्डू यहाँ दो चार लेकर क्या करूँगा ?

— — —

भागो फिर एक बार !

देखो वह खटमल-दल, आता घनघोर प्रबल ।
लेगा चूस खून सकल, जो है बना तीव्र तरल ।
खा खा कर लड्डू मगदल ।
पीकर शरबत अनार ॥

या तो मुष्टिका-प्रहार, करो विना कुछ विचार ।
डर में ध्रुव धैर्य्य धार, ताको उसे इस प्रकार ।
जैसे चूहे को बिलार ।
जग में हो जय जयकार ।

अथवा दुम दाब दॉव सर पर धर शीश पॉव ।
छोड़ो यह खाट ठॉव, छोड़ो अरे छोड़ो गॉव ।
लो न फिर इसका नाम ।
करो इसे नमस्कार ।

लगै नहीं इनका तार, ये है बड़े पाजी यार ।
लेते ख़ून हैं निसार, ताकत इनकी अपार ।
जल्दी करो स्टार्ट 'कार' ।
भागो फिर एक बार ।

क्यों क्षीण हुआ जाता हूँ ?

तुम पूछ रहे हो मुझसे "क्यों क्षीण हुए जाते हो !"
अच्छा, पहिले दम ले लूं, फिर तुमको बतलाता हूँ—
"क्यों क्षीण हुआ जाता हूँ।"

घर की हालत कहने मे अपनी ही निन्दा होगी,
पर सुनकर निर्णय करिये मैं किससे कम हूं योगी।
कितना मैं कम खाता हूं, कितना मैं गम खाता हूं,
मैं आठ बजे तड़के ही बिस्तर से उठ जाता हूं—
जितना जिन्ना से गांधी, मैं "उनसे" घबड़ाता हूं। यों क्षीण०

* * *

उठने का नाम न लेतीं वे पहिले साढ़े दस के,
मैं उठा नहीं सकता हूं मारे डर के अपयश के।
मन ही मन बड़बड़ करते दमचूल्हा सुलगाता हूं,
उनके कुरते बेटी को साबुन से नहलाता हूं।
बच्चे को बहलाता हूं, बच्ची को टहलाता हूं। यों क्षीण०

* * *

खादिम का हाल न पूछो यह भी साधन क्या कम है।
'नूह' को 'हम' 'कम्पादन' 'आदम' का नया नियम है॥

वैटरी मिलेगी परसो सालों से सुनता आता,
दो एक "बल्ब" हर हफ्ते हैं "फ्यूज"* प्रकाश-प्रदाता।
वे बिगड़ बिगड़ कहती है मिट्टी का तेल मँगाओ,
तुम निरे अपाहिज नर हो, मुझको "नइहर" पहुचाओ।
बाहर न तेल पाता हूँ, भीतर न स्नेह पाता हूँ। यों क्षीण०

❀ ❀ ❀

घर भर "ब्लैक आउट" है, दम रहा अँधेरे मे घुट,
बाहर सुनता हूँ चलता है "ब्लैक मार्केट" का गुट,
सब कुछ है सुलभ वहाँ पर वैटरी बल्ब 'नो आउट'†।
"राबर्ट ब्लैक" सा कोई जासूस नहीं, सब चिरकुट।
मैं युद्ध और उस पाजी नाजी को गरियाता हूँ। यों क्षीण०

❀ ❀ ❀

नौकर बुड्ढा मँगरू है मेरे नाना का साथी
इस हेतु समझता मुझको वह भी अपना ही नाती।
कहता कुछ हूँ सुनता कुछ, फिर कभी "नहीं" कुछ सुनता।
'यों इसे किया कर ऐसे', पर कभी नहीं कुछ सुनता॥
सैंतीस मिनट मे उससे कह एक बात पाता हूँ। यों क्षीण०
पर घड़ी वहाँ की उससे भी आगे चार कदम है।
है प्रगतिशील वह भीषण, है वडी या कि टमटम॥
करता प्रयत्न पर 'टाइम' पर पहुँच नहीं पाता हूँ। यों क्षीण०

❀ ❀ ❀

---

* खराब या बेकाम। † निःसन्देह।

है दूध न मिलता सुच्चा, 'कण्ट्रोल' मलाई पर है।
यद्यपि होता ही रहता हमला हलवाई पर है।
'ला' की परवाह न करता, वह लापरवाह प्रखर है।
उसके प्रसाद से पीड़ित रहता ज्वर से घर भर है।
फिर भी दफ्तर से आते दोने उधार लाता हूँ। यों क्षीण

❀ ❀ ❀

सोने जाता हूँ, उसका भी हाल सुनों सच मानों,
"मिस उड" नेवरहुड में हैं, है उनके पास पियानो।
चीखा करती हैं वेसुध निज स्वर लहरी में खोई,
ऐसा लगता मोटर से दब गया श्वान है कोई।
क्यो बसा सिविल लाइन में मैं इसपर पछताता हूँ। यों क्षीए

❀ ❀ ❀

पिछले दस बाहर दिन से आ जाता है मुझको ज्वर,
कल मुझे देखने दिन मे आये डाक्टर गड़बड़कर।
जब गये हाथ धोने को माँगी साबुन की बट्टी,
मँगरू तुरन्त ले आया बेले की गुड़ की पट्टी।
रोऊँ या हँसू अभी तक मैं सोच नहीं पाता हूँ।
यों क्षीण हुआ जाता हूँ

❀ नियम कानून। † पडोस।

"सम्मेलन करना खेल नहीं"

हाँ सम्मेलन, कवि सम्मेलन
करने का अद्भुत आयोजन।
जिसका पानी रखना हो तो
त्यागो कुछ दिन पानी भोजन।
जागो कितनी ही रातों को
भूलो अपने घर के प्राणी।
तब आ पावेंगे ये कविगण
लेकर निज कविता कल्याणी।
है यह कुनैन की कटु पुड़िया
मिष्टान्न मधुर पँचमेल नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं॥ १॥
मैंने भी सम्मेलन करना—
चाहा, हाँ सब कुछ था तयार।
इतने में वृद्ध सभापति का
आया औचक ही एक तार।

"सर्दी लग गयी, जुकाम हुआ"

लो सारा खेल तमाम हुआ !!

यह प्रगतिशील अब कैसे हो

आकुल अतीव हृद्धाम हुआ।

यह सम्मेलन का सगड़ है

है वायुयान या रेल नहीं

सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ २ ॥

❀ ❀ ❀

लावे दूसरे सभापति को

जब गया 'कैण्ट' कर साजबाज।

आ गयी ट्रेन, डब्बा डब्बा

ढूँढ़ा, गायब थे महाराज❀।

चेहरे लटकाये घर लौटे,

सब टॉय टॉय हो गयी फिस्स।

ज्यों दिल्ली से लीडर लौटे

लौटे लन्दन स्ट्रैफर्ड क्रिप्स ॥

हो सका आज तक मेल नहीं।

सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ३ ॥

❀ ❀ ❀

❀ आदरणीय पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी एम० ए० जो कवि सम्मेलन के मनोनीत सभापति थे।

बेनी बाबू* ने कहा 'चलो',
चौबेजी बोले—"हाथ मलो"।
पर मेरे मन ने कहा—"यार
कुछ पैसे आज तुम और गलो" ॥
श्री सबरवाल† बोले "कुछ भी
है सत्य नहीं, जग है असार"।
घर लौटा ग्यारह के लगभग
देकर फिर से जब एक तार।
डरते डरते, सीढ़ी पर से
'वे' देवें कहीं ढकेल नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ४ ॥

* * *

पर 'वे' तो निद्रादेवी की
थीं समाराधना में तत्पर।

---

* हरिश्चन्द्र कालेज, काशी के सुयोग्य प्रिन्सिपल श्री बेनीप्रसाद गुप्त एम० ए०।

उक्त कालेज के अध्यापक तथा नगर के प्रसिद्ध सार्वजनिक कार्यकर्ता श्री कमलाकर चौबे बी० ए० एल० टी०।

† काशी के प्रधान पोस्टमास्टर श्रीयुत सब्बरवाल। आप बड़े ही धार्मिक मनोवृत्ति के व्यक्ति हैं तथा साधुओं की संगति और भजन जप आदि में निरत रहते हैं। आप श्री बेनीप्रसादजी के मित्रों में हैं।

नासिका-रन्ध्र से चिर परिचित
स्वर निकल रहा था घर्र घर्र ॥
उर यद्यपि था भयभीत नहीं
पर उसमें कुछ कम्पन-सा था।
धड़कन हूँ उसे न कह सकता
हाँ कुछ उत्थान पतनसा था।
सोचा नाहक आतंकित हूँ
मैं चोर नहीं, घर जेल नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ५ ॥

* * *

अब इन्हें जगाना होगा ही
कुछ करो नहीं फल का विचार।
यों तुम गृहिणी जी के समक्ष
डट जाओ बनकर खाकसार।"
मन की ये बातें बहुत ठीक
'स्वर' से क्या होगा उदर शान्त !
व्यञ्जन बासी हो जायेंगे
कल अभी दौड़ता है नितान्त ॥
यह काया काया ही तो है
करना समुचित अवहेल नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ६ ॥

घर मे था पूरा ब्लैक आउट
मैं किसी पात्र से टकराया।
जग पड़ीं चौंक कर 'वे' बोली—
(कुछ कुछ कम्पित थी यह काया)।
अब आये हैं हजरत कहिए
क्या शान्त हो गया पागलपन!
पहिले मैके दें भेज मुझे
फिर करें खूब कवि सम्मेलन!
भरवा लावें यह लालटेन

घर मे मिट्टी का तेल नहीं!
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ७ ॥

फिर आज सवेरे बादल दल
आकर धमकाने लगा मुझे।
पर निकला घर से छाता ले,
कुछ भय-सा भाने लगा मुझे॥
घनघोर लगी वर्षा होने
था पता न एक सवारी का!
पर साइकिल रिक्शा एक मिला
काटता समय बेकारी का।
पैसे के कारण कौन कौन-सा

संकट सकता झेल नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ८ ॥

❀ ❀ ❀

मतवाला 'था रिक्शेवाला,
कुछ काला था रिक्शेवाला!
लख उसे भड़क कर भैंस एक
भागी, कैसा गड़बड़ झाला!!
रिक्शा करता था निज गति से—
गजगामिनियों का गर्व हरण।
कुछ दूर चला था इतने में
चीत्कार कर उठे सब साइरेन❀।
थे संग हमारे सूर्य्यवली†
इससे हम भगे अकेले नहीं।
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥ ६ ॥

❀ ❀ ❀

पढ़ते 'हनुमान चलीसा' हम

❀ हवाई हमले के खतरे की सूचना देने के लिए बजने वाला भोंपू। पर ये केवल अभ्यास (रिहर्सल) के लिए बजाये गये थे।

† श्री सूर्यबली सिंह, प्रसिद्ध जनसेवक

कूदे रिक्शे से धुवाँधार।
था एक अनाथालय समीप
जिसके दोनो थे खुले द्वार।
घुस गये उसी मे हम दोनो
घुसते ही चले गये अन्दर।
"यह तो वनिताश्रम है हुजूर"
बोला तुरन्त आकर नौकर।
इस घटना की मिल सकती है
दुनियाँ मे कहीं 'परेल' नहीं।
सम्मेलन करना खेल नही ॥१०॥

❀ ❀ ❀

वनिताओं का सुन कोलाहल
हम दोनो के औसान भगे।
फाटक की ओर तुरत हम ले
झोले, सोटे सामान भगे।
पर बाहर खतरे का झोपा,
भीतर महिलाओ का पोपा।
फाटक पर हो चुपचाप खडे
अपना अपना माथा ठोंका॥

भीतर बाहर के बीच खड़े
क्या लगते थे बेमेल नहीं!
सम्मेलन करना खेल नहीं ॥११॥

यह कवि सम्मेलन श्रीहरिश्चन्द्र कालेज में हुआ था! दो
वेशनों के लिए श्री हरिऔधजी, तथा श्री चतुर्वेदीजी अध्यक्ष चु
थे! सयोजक था मैं। मुझे कई सम्मेलनों में भाग लेने तथा
आयोजन करने के अवसर–मिल चुके हैं! पर इस सम्मेलन के
में आरम्भ में मुझे बड़ी कठिनाइयाँ पड़ी थीं। ईश्वर को धन्य
कि यह सम्मेलन श्रीयुत श्री नारायण जी तथा अनेक प्रसिद्ध कवि
आकर आशातीत ढग से सफल बनाया।

—लेखक।

वीर-काव्य

उठ !

रे मानव !

उर्वरा धरित्री का विशाल वक्षस्थल यह

कम्पित हो,

सुस्मित हो—

तू !

बढ़ रे

यों

जैसे

पितृपक्ष समय

पितृहीन मानव समाज की

दाढ़ी।

किन्तु अरे !

छील दे तू, फेंक दे तू

शत्रुओं को,

पढ़े लिखे सभ्य छात्र

अप टु डेट
बिना बन्ध
जैसे
ज्योतिष
नक्षत्र वार
या मुहूर्त
के विचार
से रहित सर्वथैव
निज सेफ्टी रेजर से
अपने कपोलकेश
घस देते।
चल ऐसे
जैसे
सर्वजनिक सस्था बीच
पद अधिकार हेतु
पाकर चुनाव काल
चलते हैं आपस में
पदत्राण।
वीर,
रे मनुष्य।
उठ !!

कवि के दो रूप

सम्मेलन मे
कविता पाठ के पूर्व—

श्री गुरुचरण सरोजरज, निजमन मुकुर सुधार।
वरनौ कविवर विमल यश, जो दायक फल चार॥

कविवर के दो रूप हैं, इसे रखो तुम याद।
सम्मेलन के पूर्व अरु, सम्मेलन के बाद॥

निर्गुण से हरि होत है, सगुण कहत मतिमान।
सगुण होत कवि है प्रथम, निरगुन होत निदान॥

इन दोनो कवि-रूप का, वर्णन अमित अपार।
करता हूँ उपकार-हित, निज अनुभव अनुसार॥

प्रथम रूप कविका सुन्दर अब हम तुमको दिखलाते हैं।
कवि सम्मेलन होता है जब, कवि लोग बुलाये जाते हैं॥
आते है पत्र अनेक नेक, जिनकी रहती हैं मृदु भाषा—
"आइये कृपाकर आप यहाँ, हमको है दर्शन अभिलाषा॥
सुनते आते हैं नाम सुयश, दर्शन भी अबकी हो जावे।
हे महाकवे। हार्दिक इच्छा पूरी यह सबकी हो जावे॥
स्वागत में त्रुटि होगी न एक, सब साज सजाये बैठे हैं।
आइये आप जैसे भी हो हम पलक बिछाये बैठे हैं॥
बैठे हैं यहाँ प्रतीक्षा मे हम मार्ग जोहते उत्तर का।
स्वीकृति आनेपर भेजेगें हम तुरत किराया इण्टर का॥

इसी भाँति के पत्र बहु, आते कवि के पास।
उसे मनाते हैं सभी, ज्यों दमाद को सास॥
अति प्रसन्न मन सोचता, कवि पाकर ये पत्र।
"लगा फैलने सुयश मम, अत्र तत्र सर्वत्र॥"
इधर नहीं कुछ काम है, बैठा हूँ बेकार।
क्या है हर्ज चला चलूँ, अबकी बार बिहार॥
किन्तु आलसी सुकवि ने, पत्र न भेजा यार!
तुरत तार शैतान सा, सर पर हुआ सवार॥
भाव यही था—देर मत करो कृपा अवतार।
आ जाओ करने सखे, हिन्दी का उद्धार॥
मनिआर्डर भी साथ ही मिला बजरिये तार।
रुपये पूरे बीस थे, हुए सुकवि लाचार॥

क्या करते लाचार हो गये।
बाँध छान तैयार हो गये।
ताँगा किया, सवार हो गये!
प्लेटफार्म के पार हो गये॥
गाड़ी आई, चढ़े चाव से।
मोमफली भी आधपाव ले।
खाने लगे, भूल दुःख दिल का।
लगे फेंकने बाहर छिलका॥
अब पहुँचे गन्तव्य थल, गाड़ी रुकी ललाम।
दीख पड़ा नर-झुण्ड से, भरा हुआ प्लेटफार्म॥
है हार पिन्हाया गया इन्हें।
मोटर मे बिठाया गया इन्हे।
चलते थे ये सकुचाते से।
शरमाते से, बलखाते से॥
इसी भांति कितने सुकवि, आये भय-अवदात।
एक विशाल मकान मे, सबकी जुटी जमात॥
स्वागत मन्त्री जी बार बार।
जाते थे सबके द्वार द्वार।
कृपया चलकर जलपान करें.
कुछ चाय पिये, तब स्नान करें।
दिन भर कवि दामाद सम, यो आदर पाते।
कोई चीज हुई न कम, स्वागत की हद हो गयी।

भोजन के पश्चात् जब, बजे रात को आठ।
हुआ शुरू पण्डाल मे, सबका कविता पाठ॥
पूरे एक बजे हुआ सम्मेलन यह बन्द।
घण्टों तक आवाज कवि करते रहे बुलन्द॥
अद्वितीय यह आपने देखा कवि का रूप।
अब द्वितीय कवि-रूप नवनिर्गुन लखै अनूप॥

दूसरे दिवस दस तक सोये।
सबने उठकर फिर मुँह धोये॥
मन्त्रीजीका था पता नहीं।
शायद प्रातः थे गये कहीं!!
चपरासी से कहलाने पर!
उपमन्त्री आये एक्के पर!
बोले कहिये जलपान मिला!
खोया था जो समान मिला!
मन्त्री जी हैं बीमार पड़े।
वे हो सकते हैं नहीं खड़े!

———

कवि से—

हे कवि अब कुछ और सुना रे।
तज यह सजनी-सम्प्रदाय तू,
मतकर यों अब हाय हाय तू।
कर जाग्रति के नव उपाय तू,
जाग स्वयं, सोये स्वदेश को—
निज कवित्व से पुनः जगा रे।
हे कवि अब कुछ और सुना रे।
कलमल, छलछल, रुनझुन को तज,
नये साज से अब तू जा सज।
प्रेयसि के अब मत छू पदरज,
मूछ मुडाना त्याग अरे कवि!
ये अपने झोंटे मुड़वा रे।
हे कवि अब कुछ और सुना रे॥
क्यों उस पार सदा रहता है,
इस जग का कुछ तुझे पता है?
क्यों समाज-बन्धन खलता है,
कुछ रहस्य इसमें अवश्य है—

चुपके से मुझ को बतला रे।
हे कवि अब कुछ और सुना रे॥
हुआ विरह व्याकुल तू जब से।
बना प्रगतिवादी तू तब से।
होगा काम नहीं इस ढब से।
अब विवाह बन्धन में बध जा।
त्याग प्रणय कुत्सित अपना रे।
हे कवि अब कुछ और सुना रे॥

———

ठुकरा दो या प्यार करो !

ाज दही पेड़ा खा करके तुम्हें मनाने आया हूँ।
ण्डत से पत्रा दिखवा कर तुम्हें रिझाने आया हूँ॥
ीडर' मे वाण्टेड ज्यो देखा, त्यों ही क्षुधा नींद सब भागी।
ग-जाग कर किया सबेरा, तुम्हें जगाने आया हूँ॥
ो घर दुवार रख रेहन बी० ए० बी० टी० पास किया।
पना जीवन चरित प्रेम से तुम्हें सुनाने आया हूँ॥
ानी का यह सूट पहिन कर तुम्हें रिझाने आया हूँ।
ारी का यह बूट पहिन कर तुम्हे लुभाने आया हूँ॥
ार्टिफिकेटों का यह बण्डल तुम्हे दिखाने आया हूँ।
पने नयनों का यमुना जल तुम्हें चढ़ाने आया हूँ॥
फ्तर-दफ्तर दौड़-दौड़ कर विसा बूट का सारा तल्ला।
ल्ला की महतारी - हित फिर नाच दिखाने आया हूँ॥
रुपये प्रतिदिन पाते है हलवाई ऊपर से भोजन।
बी० ए० बी० टी हूँ भूखा, यही बताने आया हूँ॥
ब भी तो क्लर्की तुम दे दो, बिनती अंगीकार करो।
ागे तुम जानों, क्या वश है, ठुकरा दो या प्यार करो॥

तेल लेने जा रहा हूँ

तेल लेने जा रहा हूँ !
कीजिए शुभ कामना मैं तेल लेकर लौट आऊं।
भीड़-गेहूँ संग मे मैं घुन सरीखा पिस न जाऊँ।
हृदय में कुछ धुक धुकी है, और कुछ घबडा रहा हूँ।
नित्य प्रातःकाल जिनके हाथ में रहता कमण्डल।
दोपहर में नित्य कर मे तेल की है एक बोतल।
देखकर यह प्रगति कितना हर्ष अतुलित पा रहा हूँ।
कल गये थे तेल लेने वही लाला रामचन्दर।
साहसी थे, घुस गये इस हेतु निर्भय भीड़ अन्दर।
पर हुआ जो हाल, सुनिये वही हाल सुना रहा हूँ।
हाथ उचकाये हुए थे, और मुँह बाये हुए थे।
टिकट मिलता ही नहीं था, विकट घबडाये हुए थे।
याद कर उनकी दशा मैं भी स्वयं मुँह बा रहा हूँ !
लग रहे हर ओर से धक्के उन्हें भीषण भयानक।
बन गये थे रामचन्दर से त्रिशंकु अहा ! अचानक !
सोचते थे मैं गगन की ओर उड़ता जा रहा हूँ।
क्या करें, जावें किधर वे, इधर धक्का, उधर धक्का।

जेब से उनकी घड़ी लेकर भगा कोई उचक्का।
इस घड़ी उनकी दशा को सोचकर अकुला रहा हूँ।
पर उन्हें अपनी दशा का ज्ञान तक क्या उस घड़ी था।
हैं कहाँ, क्या कर रहे, अनुमान तक क्या उस घड़ी था!
हाल उनका मैं उन्हीं की ओर से बतला रहा हूँ।
डेढ़ घण्टे तक रहे वे घूमते बनकर बगूले।
स्वयं अपनी और घर की सब दशा सब भांति भूले!
मानियेगा सच, नहीं कुछ नमक मिर्च लगा रहा हूँ!
हाथ में अब थी न बोतल, और कुर्ता था न तन पर।
थी दुपल्ली उड़ चुकी, थीं कुछ खरोचे भी बदन पर।
सोच कर उनकी छटा यों छटपटाहट पा रहा हूँ।
किस तरह धोती उड़ी यह कौन जाने हे तिवारी!
वे खड़े थे भीम या गामा सरीखा लँगोट धारी!
साफ था मैदान सोचा मैं सभी का खा रहा हूँ!

हे खरबूजों के देश जाग

ओ शहर, घहर, उठ साभिमान,
पण्डित जी की चुटिया समान।
क्यों सोया है अजगर समान।
चल उछल कूद वानर प्रमान॥

तेरी छाती पर किसी समय,
छम छम बजती थी पायजेब।
तेरी सन्तानें मोटी थीं,
खाकर अनार अंगूर सेव॥

हा आज वहीं खुमचे वाले
हैं बेंच रहे रेवड़ी चूड़ा !
कीचड़ से गीली सड़को पर,
है आज पड़ा सूखा कूड़ा !!

हा वही देश है जहॉ कभी
कनकौवे उड़ते धुँवाधार ।
प्रातः सन्ध्या गलियों तक मे,
अखबार दिक रहे हैं अपार !!

खेलते जहॉ के वीर पुत्र
शतरंज दिवस भर रात रात ।
गूॅजती जहॉ की गलियो मे,
ध्वनि भी बस केवल मात मात !!

हॉ ! आज वहीं की गलियो मे
लेक्चरबाजी की धूम धाम ।
गलियो तक मे सैलून खुले,
कुर्सी पर बैठे है हजाम !!

ओ देश दुपल्ली टोपी के,
तेरी छाती पर लगा हैट !
घूमते आज कालेज स्टुडेण्ट,
जिनके शरीर में नहीं कैया !

हाँ, यहीं पचासी के बुड्ढे,
सुरमा से रंजित किये नयन।
हुक्का की नली दिये मुँह में,
करते रहते थे दिव्य हवन।

अब वहीं नौ बरस का लड़का,
चश्मा से आँखे किये चार।
पोपले वदन फूँक रहा,
फक् फक् फक् फक् फक् फक् सिगार !!

लेते चुम्बन थे जहाँ युगल,
लेते हैं चले सुराज हाय!
कब्रों पर आह आशिकों के
फिरते एम० एल० ए० आज हाय

थे जहाँ नवाबों के नाती,
घूमते मस्त कर सुरा पान।
हाँ आज वहीं ये देश भक्त,
गाते फिरते राष्ट्रीय गान।

साकी ला इधर जाम भर दे,
थी जहाँ गूञ्ज सन्ध्या सबेर।
होतीं थहसें दिल पर अनेक,
अब वहीं हो गया हेर फेर।

रजनी मे जिन उद्यानो मे,
बुर्का से अपना छिपा गात।
जारो के हित अभिसार निरत
बेजार घूमतीं बेगमात।

हा, वहीं उन्हीं उद्यानो में
सन्ध्या के सात बजे विलोल!
सहपाठीगण से करती हैं
कालेज-कन्याएँ कलोल।

उनके सर से सर की साड़ी,
ऊँची ऐंड़ी के पदत्रान!
दिखलाते हैं दर्शकगण को,
भारत भविष्य जाज्वल्यमान!!

उफ जहाँ भृत्य अवलम्ब बिना,
पाँजामा पहिना नहीं वाह!
हो गया शत्रुओ के अधीन,
अभिमानी वाजिद अली शाह!

अब वहीं रईसो के लड़के,
निज संग बिठाकर फिल्मस्टार!
होटल तक आते जाते है,
खुद हाँक रहे हैं फोर्ड कार!!

लखनऊ! काम की रंगभूमि!
सुर्ती किमाम की रंगभूमि!
हो गयी जाम की रंगभूमि!
साहब सलाम की रंगभूमि!

रसगुल्ला का सीरा जो था।
वह आज हो गया हाय! राब
सिक्का पलटा, उलटा विचार,
इक्का हैं हाँक रहे नवाब!!

ओ नगर, जाग तज दे निद्रा,
पी चाय! हटे सुरती अपार!
ले ओवल्टीन, हो जा प्रबुद्ध,
दे फूँक हवाना का सिगार!!

कर दे प्रचण्ड रेडियो-नाद!
सब सिहर उठे सिनेमास्टार!
चल पड़ें होटलों से सत्वर,
मेम्बर असेम्बली के अपार!!

फिर होवे तू सौभाग्य भूमि.
फिर होवे तू आराम तलय!
फिर यहाँ मिलें दो अधर युगल,
फिर फिरे दशा, सोये तू दब!!

लखनऊ, चेत लखनऊ, चेत,
उठ जाग, प्राप्त हो तुझे विजय !
फिर ठुमके तबले औ मृदंग,
फिर हो भाड़ों का भाग्योदय !!

ओ मतवालों के देश जाग !
बैठे ठालों के देश जाग !
ओ खरबूजों के देश जाग !
ओ भड़भूजों के देश जाग !!

———

प्रेम की यह बाट !

री सखि ! प्रेम की यह बाट !

तुम यहाँ से कोस भर पर

मैं खड़ा इस विजन वन में।

साइकिल पंक्चर हुई है,

है नहीं उत्साह मन में।

पास में पैसा नहीं है।

है न इक्के का ठिकाना।

थक गया हूँ बेतरह मैं,

है अभी दो मील आना।

और बायाँ पैर जूते ने—

लिया है काट—
री सखि, प्रेम की यह बाट।

❀ ❀ ❀

अगर आऊँ भी वहाँ तक,
तुम न बोलोगी सहेली।
मुँह फुलाये ही रहोगी,
मुँह न खोलोगी सहेली!!
मैं मनाता ही रहूँगा,
तुम झिड़कती ही रहोगी।
प्रेम की सुन दिव्य बातें,
तुम भड़कती ही रहोगी॥
पर न मैं यह सब सहूँगा,
हूँ न जाहिल जाट री
सखि प्रेम की यह बाट,

❀ ❀ ❀

जानता हूँ तुम मुझे
अब तक नहीं हो जान पायी।
इस हृदय के प्रेम को,
प्रेयसि नहीं पहिचान पायी।
आह! आखिर सरल कैसे,
तुम बनोगी वीर बामा

है समझ रक्खा मुझे
तुमने कुली या खानसामा।
और अपने को समझती,
हो सदा ही लाट।
री सखि! प्रेम की यह बाट,

❀ ❀ ❀

याद है वह निशा? जब
मैंने तुम्हारे बाल आली।
बाँध दी थी खाट से
तुम जाग कर दे उठी गाली!!
और तुम भी तो चली थी,
इसी भाँति मुझे छकाने।
पर अमित निरुपाय होकर,
तुम लगी थी मुस्कुराने!!
वहाँ बाल बड़े तुम्हारे,
मैं यहाँ खल्वाट।
री सखी! प्रेम की यह बाट!!

किस लिये न कल पाये पधार ?

इन्कायरी ऑफिस की जय हो !
उसमे सुबुद्धि का संचय हो !
उसके सुख का फिर क्या कहना ,
जिससे उसका प्रिय परिचय हो !

मुझ पर उसका उपकार भार !
कितनी अनुपम ! कितनी उदार !!
जिसके अनेक जन्मान्तर के,
पुण्यो का होता है, समुदय !
है वही वहॉ बस. जा सकता ,
यह परम सत्य मानो निश्चय ।
जाकर न देख लो एक बार !

परसो अपने भाग्योदय वश ,
मुझको भी पड़ा वहॉ जाना ,
गाड़ी का समय सटीक वहॉ
मुझको. बतलाया मनमाना ।
लौटा मैं घर ।हर्षित अपार !
गाड़ी में बिल्कुल भीड़ न थी
केवल कुछ योगाभ्यासी जन

दिखलाते थे नाना आसन,
अंगों का सुंदर संचालन।
कितने सुंदर वे चमत्कार !

सुख के संग दुःख लगा ही है !
उत्थान जहाँ है वहाँ पतन,
हो गयी तनिक-सी दुर्घटना,
इस योग प्रदर्शन के कारण।

टूटी टाँगें टूटे कपार !
मानिकपुर तक तो किसी भाँति,
आ पहुँचा बजते सात, मित्र !
सोचा घंटे भर में करना,
है, किसी ट्रेन को फिर पवित्र।
दस तक तो बाँदा में तयार !

पर यहाँ ज्ञान का खुला नयन,
बोला जब टिकट-चेकर उन्मन !
"गाड़ी" आती दो बजे रात !
तबतक खोजिये कहीं निर्जन,

सोइये कहीं टाँगें पसार !
बरसों से थी चलती गाड़ी,
परसों से वह हो गयी बंद !

अब उसकी चर्चा मत करिये,
बोली टी० टी० ई० सुनिर्द्वन्द !
प्रतिपल परिवर्तन की बहार !

'मानिक पुर' नाम रखा जिसने,
बेशक था भाषा - विज्ञानी!
मानिक के भाव जहाँ मिलता
इतना सुंदर भोजन पानी।
सुविधाओं का यह स्वर्ग द्वार !

चीनी के कुछ खाये लड्डू,
जिनमें खोए का नहीं नाम !
खो गया अगर खोआ खुद ही
इसमें अचरज का कौन काम!
बदबू करते थे वे अपार !

लड्डू, हाँ लड्डू ही तो थे,
थे अविच्छेद्य, थे चिर नवीन!
षट् रस का उनमें भरा स्वाद,
लड्डू या टिंक्चर आयडीन
लड्डू या बड़हर के अँचार !

मिर्चे की तरकारी भी थी;
जिसमें थी बैंगन की बहार,

वैगन वैज्ञानिक करै पृथक्,
दूँगा सौ रुपये पुरस्कार।
थे नीर-क्षीर से एक तार!

पूड़ी को यदि देता निचोड़
पाता मिट्टी का बहुत तेल,
राशन की इस कठिनाई में
करता न अँधेरे में कुलेल!
फूटता नहीं सिर बार-बार!

पर कभी तो यह स्टेशन,
कहता है करो योग-साधन,
नश्वर है यह मानव का तन,
खा-पीकर करो नहीं पोषण!
है बंद रहा करती बजार!

क्या करता हो लाचार रहा
लेटा मैं टाँग पसार रहा।
इन ऑफिस वालों पर करता
वरदानो की बौछार रहा।
पहुँचा बाँदा में बजे चार
इस लिये न कल पाया पधार॥

———

भइया ये कवि हैं प्रगतिशील !

देखो हट जाओ रहो शान्त,
चुप बैठो होकर परिश्रान्त !
देखो वह आता वहाँ कौन ?
हो जाओ तुम सब तुरत मौन।
कितना सुंदर इनका दर्शन,
कितना अद्भुत है आकर्षण।

ये तोड़ चुके हैं वन्ध सकल,
इनका बीहड़ मस्तिष्क धवल।
इनके नितांत है नये भाव,
इनका महिलाओं का स्वभाव।
पीड़ित सदैव उर अंतराल,
करुणा सिंचित है शब्दजाल।

मजदूरों के हैं परम मित्र,
मजदूरिन से है प्रेम घना।
पूँजीपतियों से है विरोध,
पूँजी से पर है प्रेम वना।
इनके कंठस्वर का निनाद,
है यही विशिष्टा द्वैतवाद।

बचपन में जब चौदह के थे,
पूरी करने को निजी साध।
बेपढ़ी किसी श्यामा के संग,
नाना-नानी ने दिया बाँध।
कल्पना-नटी को सौत मान,
चिढ़ती कविता से जो निदान।

पर इन्हें चाहिये ही कुछ हो,
कविता करने का उत्तेजन।
कुछ आकर्षण कुछ समुल्लास,
कुछ अपटूडेट सुंदर साधन।
मधुकरी वृत्ति हित सभी त्याग,
घर द्वार, किया धारण विराग।

फिर भी इनमे है, विश्व प्रेम,
प्रतिपल सुंदरता की तलाश।
प्रमदाओं की उन्मुक्ति हेतु,
प्रस्तुत सदैव हैं, बाहु पाश।
सिनेमा स्टारों का अभिनंदन,
करना है इनका व्रत पावन।

आवरण ही न हो अंतराय,
आवरण जहाँ है वहाँ पाप।

कहता इनका है संप्रदाय,
बंधन मानवता का न भाय।
उन्मुक्त व्यवस्था हो समस्त,
उन्मूल और विच्छिन्न ध्वस्त।

इस जग मे हैं कुछ शकी जन,
करते सदैव छिद्रान्वेषण।
कहते हैं—यह सब है अविहित,
इसमें है, इनका स्वार्थ निहित।
कुछ इसकी तह में छिपी बात;
क्यो यह परिवर्तन अकस्मात्।

पर मुझसे जो पूछे कोई,
मैं कह सकता हूँ यह निर्भ्रम।
कहना ही क्या खा सकता हूँ
सिर पर धर इनके हाथ कसम।
ये सब हैं, पूरे सच्चरित्र,
संदेह न इसमे करो मित्र।

फिर सच्चरित्र या दुश्चरित्र·
तुम सबसे इससे क्या मतलब।
तुम कलाकार को मत देखो।
देखो तुम इसकी कला अजब।

रखता सदैव ही अपना पन,
कवयित्री या कवि का जीवन।'

कर डाले बुढ़ऊ 'तुलसी' ने
तीर्थों में रह कुछ काव्य प्रथन।
कर सके सूर वृन्दावन मे
विनती के कुछ गायन वादन।
कवि सम्मेलन तब यार न थे,
रेडियो और अखबार न थे।

बीते युग की बीती बातें,
सुन कर देगा अब कौन दाद।
इनको देखो इनको समझो,
सुन लो इनका भी काव्यनाद।
इस युग के ये ही हैं वकील,
भइया ये कवि हैं, प्रगतिशील।

———

ओ विप्लव के बादल !

ओ ! विप्लव के बादल !
ओ विप्लव के बादल !
ओ सावन के बादल !
ओ रावन के बादल !
रुक जा, ठहर, घहर मत इतना,
हो प्रशान्त !
क्यों अपार
यों प्रहार
करता है धरातल पर ?
रोष दग्ध,

रे विदग्ध
देख तो तनिक आह !
गोरखपुर से लखनऊ को
बी० एन० डब्ल्यू रेलवे की राह
रुकी हुई है, है विकट,
मिलता नहीं है टिकट।

ओ अधीर !
चौकाघाट का विराट पुल
गया होता रे कभी का खुल
शठ तेरे कारण ही
जल-सावित्ता है मही।
जानता नहीं है तू अरे ओ घन !

राय साहब पण्डित श्री नारायन
चतुर्वेदी,
ओ गगन-भेदी !
करने वाले हैं कल बैठक सम्मेलन की,
तिस पर नहीं तू मानता है अरे ओ सनकी !

देखे दोनों ओर सड़कों के नाला निनाद,
हिन्दी काव्य-कानन में जैसे हाला-प्याला-वाद।
ताँगा धरातल की आकर्षण शक्ति से आबद्ध,
घोड़े और कोड़े का अनिश्चित हो रहा है युद्ध,

हे विरुद्ध !

हो निरुद्ध ।

कपड़ों के अन्दर से निर्झर रहा है झर,

रे प्रखर !

सूझती नहीं हैं सड़क, सूझती नहीं है गली,

ओ कपटी, ओ क्रोधी, ओ छली !

मिन्नत हूँ करता मनौती मानता हूँ मैं,

तुझको चढ़ाऊँगा मैं सवा पाव मोम्फली ।

किससे सीखा है तूने ऐसा यह पागलपन,

छायावादी कवियो से !

किससे सीखा है हठ,

मिल-हड़तालियो से ?

श्रावण की पूर्णिमा का देख यह पुण्य पर्व,

बिगड़ रहा है तेरे कारण ही रे सगर्व !

कितने तेली तमोली,

माथ मे लगा के रोली,

धेले धेले के निमित्त बाँधकर एक टोली,

धर कर विप्रवेश

घूमते अरे अशेष !

तेरे कारण ही हुए हत-रोजगार आज !

पढ़े लिखो के समान हुए हैं बेकार आज !

होंगे तेरे वर्णन से सुखी थोड़े से स्टुडेण्ट।
पर रुक जावेगा रे मूढ़ रूरल डेवलपमेण्ट।
भारत के प्रति हो रहा है क्यों तू अनुदार,
क्या तू किसी 'लीग' का कभी था कोई पत्रकार?
रे लबार! रे गँवार!
तमका ले निबिड़ तोम,
हुआ समाच्छन्न व्योम।
छिपे सूर्य, छिपे सोम!
तू भी तो ले विराम
मेरा तुझे है प्रणाम!
मेरा तुझे है सलाम।
मेरा तुझे राम राम!!
ओ प्रकाम!
ठहर, घहर नहीं, हो गये हैं कई प्रहर,
देख निज आँखों से कि उमड़ी कई नहर,
वेनिस हुआ चाहता है यह लखनऊ का शहर!
अपना यह कार्य्यक्रम अब भी तो दे बदल,
पानी खो न अपना यों, रुकजा रे! ओ सजल!
ओ पागल!
ओ विप्लव के बादल!!

कैसे ?

तेरे घर के द्वार बहुत हैं किससे होकर आऊँ मैं ?
काशी टाकी के समीप सब खुमचेवाले खड़े हुए है,
बिड़ी बनानेवाले सिनेमा टिकट वेचते अड़े हुए हैं,
नहीं तनिक भी ये सुनते हैं, कितना भी चिल्लाऊँ मैं। तेरे० ॥

गोदौलिया पर इक्केवाले, और चौक मे रिक्शेवाले,
थाने के सामने सटे है, मेवेवाले गमछे वाले,
इनका उल्लंघन दुरूह है, देख देख घबड़ाऊँ मैं ॥ तेरे० ॥

सट्टी मे ऊँटो का मेला, बैलगाड़ियो का भी रेला,
और जतनबर पर ठेलेवाला रोके अपना है ठेला;
समझाने से नहीं मानता फिर कैसे समझाऊँ मैं ॥ तेरे० ॥

सभी पटरियो पर दवाइयों के विक्रेता पड़े हुए हैं,
घाट सीढ़ियो पर भिखमंगे मानों उनमे जड़े हुए हैं।
चौखम्भा मे सॉड़ खड़े है, कैसे उन्हें हटाऊँ मैं।
तेरे घर के द्वार वहुत है किससे होकर आऊँ मैं।

तुम कल्पना करो।

तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो,
तुम कल्पना करो।

हो गयीं फजूल ये तमाम डिग्रियाँ;
चाटो शहद लगा-लगाके अब इन्हें मियाँ।
जीने न तुमको देंगी अपटूडेट बीबियाँ।
चुपके से रात में उठो, भागो, देहातिनों
से शादियाँ करो, नवीन शादियाँ करो।
तुम कल्पना करो।

तुम हो पढ़े लिखे इधर अपढ़ ये बीबियाँ,
कैसे भला पसंद हो सकें तुम्हें मियाँ।
तुमको तो चाहिये नवीन जात यौवना।
बुढ़ऊ धरम को छोड़ जवानी के लो मजे,
गलबाहियाँ करो अरे गलबाहियाँ करो।
तुम कल्पना करो।

पढ़ने से फायदा हो क्या जो धर्म रह गया,
वह क्या सुधार ही न जिसमें देश बह गया?
वह धर्म क्या जवान को जो आँख दिखावे?
युवती युवक के प्रेम में जो टाँग अड़ावे?

तुम अपनी वासना की एकमात्र पूर्ती की
बस साधना करो, प्रचंड साधना करो।
तुम कल्पना करो।

आनंद तुम करोगे, फिर भोगेगा कौन दुःख ?
यमपुर के उन मजों से न होना मियाँ विमुख।
उड़ने लगे जो लात, बिलबिला के बोलना।
रक्षा करो, बचाओ, दोहाई ऐ देशमुख ;
यह कल की बात आज प्रेम पारणा करो।
तुम कल्पना करो।

तुम गालियाँ दिये चलो महन्थ सन्त को,
तुम 'सेठ' 'जमीदार' की भी भर्त्सना करो।
एकान्त में उन्हीं के घर मूँडन मे छंद पर
रुपये लो और प्रेम से उदरस्थ गार तुम
मिष्ठान्न और पूड़ियाँ कचौड़ियां करो
तुम कल्पना करो
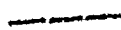
"चीनी सेना"

'वार' का जमाना है
वार पर वार हो रहा है एक दूसरे पै
जनता संत्रस्त है
नाहक, फिजूल ही,
भारतीय होके भला 'वार' से ही डर क्यों !
हिन्दुओं के घर मे तो रोज एक 'वार' है !
रविवार, सोमवार, भौमवार, बुधवार.
गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार, बार वार !
'वार' हो रहा है पिता पुत्र, पति पत्नी में
चचा औ भतीजे मे, दमाद औ ससुर में !
हम सब बीर हैं,
डरेंगे गोले गोलियो से ?
छानते हैं गोले रोज चार चार गण्डों के,
गुण्डे, पण्डे, पण्डित, महन्थ और कवि लोग,
बाबुओं को देखो खाते गोलियाँ हैं वे भी नित्य
कई वार लेकर हकीम से जुलाब की !
तीन चार वर्ष हो चुके हैं युद्ध होते हुए

फँस चुका फन्दे मे है मूषक मुसोलिनी
अन्त है निकट अब इन नीच नाजियों का
विश्वत्राण कारी इन पूरे पापी पाजियों का।
हो रहा हमे है हर्ष
देख के प्रभावोत्कर्ष
मित्रराष्ट्र वालों का,
खूब चचा चर्चिल ने
ठोंक-ठोक ठीक किया शत्रुओं को, वाह वाह !

गेहूँ तो मिलेगा फिर
पूड़ियाँ छनेंगी खूब
बीत गये कितने ही दिवस मालपूए बिना
ब्राह्मण और मालपूआ
दोनों का घनिष्ट प्रेम
शाश्वत है अविच्छिन्न !

चीन भी डॅटा हुआ है युद्ध मे अचल वीर
इतने दिनों से, खूब,
इतने ये सुस्त, कई पीढ़ी के अफीमची,
चिपट गये हैं आज
पीड़ित जापान है,
भूला खान पान है
पूरा परेशान है

दिये जा रहे हैं चीनी एक साथ घमाघम,
आ गयी है नाकों दम
खोजो मियाँ तो जो किसी बिल में जगह तुम।

× × × ×

भारत के अन्दर भी
जनरल च्यॉग काई शेक
चीनी दल के प्रधान
आये थे स्वकार्यवश
हुए थे प्रसन्न ख़ूब !
देख भारतीयों को
खा करके मोहन भोग
हलुआ सोहन दिल्ली का
आगरे की दालमोट !

× × × ×

एक दिन प्रातः ८ बजे का समय था।
उठने का कर ही रहा था सुविचार मैं
सुना चीनी दल था कहीं से कहीं जा रहा,
सोचा आया होगा कोई दल फिर चीन से
लेकर अँगड़ाइयाँ मैं फिर हो गया प्रसुप्त !

× × × ×

ठीक साढ़े ११ में नींद फिर मेरी खुली
सुना मेरे बूढ़े साठ साल के श्री मामा की
बॉयी टॉग की थी कोई हड्डी ही खिसक गयी
पट्टियाँ बँधा रहे थे,
दौड़कर गया, देखा वेदना विकल थे।
बोलीं श्रीमतीजी—"चीनी दल ने दशा है की"!
"चीनी दल"!
"मेरे बूढ़े मामा और चीनी दल" बात क्या है।
ये तो भले खासे थे!
शामको थे घर पर!
चीनी दलसे है मुठभेड़ कब हो गयी।
बोलीं श्रीमतीजी—तुम्हें रहता पता है कुछ,
पेशा है वकालत का,
काम है अदालत का,
अजी ये गये थे लाने
चीनी अभी चाय हेतु
वहाँ उस भीड़ ने—
उसी चीनी दल ने
यह खुराफात की
मरै सारे पातकी!
"बुरा क्या है, ठीक ही है'

हूँ तो मैं वकील ही !
देश के हैं कितने अयोग्य यह नागरिक
चीनी ही खरीदने में जब टाँगे टूटती हैं,
और सिर फूटते हैं
तब क्या स्वराज्य लेंगे !
सीख लिया दोष देना सिर्फ सरकार को !
स्वयं करते हैं क्या ?
जितने दूकानदार
सब के कुत्सित विचार
सबने भरा है अन्न, सबने भरे हैं वस्त्र
कौन बेचता है पर लेकर उचित दाम !
राजा और प्रजा पर
जब है समान कष्ट
उस वक्त सोचते मनाफ़ा हैं दूकान दार
इनको धिक्कार है धिक्कार है हजार वार !

"उनके घर से"

उनके घर से रोने की ध्वनि आयी
उस ध्वनि से मेरा गूँज उठा आँगन।

बटुए का सब दूध भगी बिल्ली होगी,
ल बकरी ने, कम दूध दिया होगा।
मुन्शी जी ने बीबी जी को पीटा होगा,
बीबी होगी जोरो से चिल्लाई!
सप्तम स्वर मे करती होगी क्रन्दन।
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी,
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँगन।

। अब की तनख्वाह मिली होगी,
ा कुत्ते ने काट लिया होगा।
कुर्की करने अथवा घर पर उनके
आये होगे थाने से नायब दारोगा।
लेते होंगे रुपया, आना, पाई,
गिनते होगे खटिया, मचिया, बासन।
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँगन।

उस पार कहीं बिजली चमकी होगी,
मजदूरिन घर पर ही ठमकी होगी।
पत्नी जी ने बरतन न मला माँजा होगा,
बासी खाया, भोजन न मिला ताजा होगा।
पूड़ी उधार देता न उन्हें अब हलवाई
मोदी उधार देता न तेल आटा बेसन।
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी,
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँग

खुमचे वाले की ध्वनि सुनकर बच्चे,
मचले होंगे अनजान सरल सीधे सच्चे।
मुन्शी जी ने तब कान उमेठ दिया होगा,
लड़को ने रो रो सिर पीटा होगा।
मुन्शी है या है पूरा कसाई
अपना है खा लेता, बच्चे करते अनशन?
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी,
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँगन।

मुन्शी जी हैं कविता भी कर लेते,
सम्पादक के चरणों को सिर पर धर लेते।
कवि सम्मेलन के रुपये खा जाते,
इससे सम्मेलन में न स्वयं हैं जा पाते।
संयोजक ने नोटिस अब होगी भिजवाई
पढ़ कर वह हो गये हुए कड़ाही के बैंगन।
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी,
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँगन।

[फ]कड़ी वाले ने दाम आज माँगा होगा,
नौकर कपड़ा-लत्ता लेकर भागा होगा।
या टैक्स नहीं पा करके आज म्युनिस्पल्टी-
वालों ने पाइप काट दिया होगा।
भूली होगी सब मुन्शी जी की कविताई
लेते होंगे संन्यास तोड़कर सब बन्धन।
उनके घर से रोने की ध्वनि आयी,
उस ध्वनि से गूँज उठा मेरा आँगन।

लेट मिस्टर वेदव्यास

['कालपी ८ अगस्त। श्री सम्पूर्णानन्दजी ने लेट मिस्टर वेदव्यास की प्रशंसा की ' ' ' ' ' नेशनल हेरल्ड का एक समाचार। इसपर शिक्षा मन्त्री सम्पूर्णानन्द जी ने हेरल्ड सम्पादक श्री चेलापति राव से शिकायत की कि अठारह पुराणों और महाभारत के रचयिता महर्षि वेदव्यास को मिस्टर वेदव्यास नहीं कहना चाहिये।]

बधाई बाबा वेदव्यास।

हुए आज मिस्टर महर्षि से कैसा शुभ्र विकास।
पोंगा-पन्थी थे पुराण के गप्पाष्टकी प्रणेता।
तुम्हें बताते दकियानूसी थे भारत के नेता।
फिदा आज तुम पर शिक्षा-मन्त्री सम्पूर्णानन्द।
उदित भाग्य हो गया तुम्हारा मौज करो स्वच्छन्द।
इसी खुशी मे चेलापति ने हे गुरुवर विज्ञानी।
मिस्टर की तुमको उपाधि दे डाली है लासानी।
अब जब देव सभा मे या मुनिमण्डल में तुम जाना।
मत महर्षि कहना अपने को मिस्टर व्यास बताना।
चकित अचंभित विस्मित विथकित पुलकित औ अकुलाये।
रह जायेंगे तुम्हे देखकर सभी लोग मुंह बाये।

मिस्त्री है मिस्टरी-कारण की मिस्त्री के विज्ञाता।
चेलापतिजी—एकमात्र सम्पादक भाग्य-विधाता ॥ १ ॥

❀ ❀ ❀

मिस्टर व्यास विधायक जय हे, हे हेरल्ड सुखदाता।
पजाब सिन्ध मद्रास मराठा द्राविड उत्कल वगा।
सभी प्रान्त वालो का यू॰ पी॰ मे हरदम हुरदगा।
यू॰ पी॰ वाले देख देखकर मुँह बाये रह जाते।
मिस्टर नारद, मिस्टर तुलसी मिस्टर सूर बनाओ।
मिस्टर ब्रह्मा, मिस्टर विष्णू, मिस्टर शिव छपवाओ।
मिस्टर की फेहरिस्त बना दो हे नेशनल हेरल्ड।

निज लेखनी उठाये
लिखो जो मन में आये
हे सम्पादक चाचा!
जय हे चेलापते!
अद्भुत-मते जय हे!
लेड्डुवा पूडी बटे! ॥ २ ॥

———

'मुँहफट प्रसाद बाजपेयी'

मैं सुदर और असुंदर दोनों साथ साथ।
आता है जब कपड़े वाला बिल लेकर,
चिल्लाता है भरपेट गालियाँ देकर।
मैं छिप जाता हूँ नहीं निकलता घर से,
जाने पर उसके मैं फिर खूब बिगड़कर,

खिड़की में से गर्दन निकाल चिल्लाता,
'वह कहाँ गया पाजी नालायक सूअर'।
मैं बाहर भी औ अंदर दोनों साथ साथ।
मैं सुंदर और असुंदर दोनो साथ साथ॥

वे हथियारों से युद्ध किया करता हूँ।
गालियाँ खूब भरपेट दिया करता हूँ।
'छोड़ो मेरा घर निकल यहाँ से जाओ,'
हँसता वह मन में कहता खूब मनाओ।

पीटता कभी भरपेट मुझे वह पाजी,
फिर स्वयं बुला मुझको करता है पाजी।
मैं पोरस और सिकन्दर दोनों साथ साथ।
मैं सुंदर और असुंदर दोनों साथ साथ॥

अपना मंत्री वह मुझे बना है लेता,
नौकर चाकर जलपान पान है देता।
मैं शान भरा घूमा करता मोटर में,
अपने को मानूँ योग्य चराचर भर में।

तब तक वह कहता हटो यहां से भागो,
बस इसी मिनिट यह मेरा दफ्तर त्यागो।
भागता दबाकर दुम अपनी मैं तत्क्षण,
मै विक्ट्री और सरेण्डर दोनों साथ साथ।
मैं सुंदर और असुंदर दोनों साथ साथ॥

मैं विवश और बेकार अकिंचन प्राणी,
यद्यपि तीखी तलवार सरीखी वाणी।
रुपये ले लेकर जिनसे मैं बढ़ पाया,
उन मित्रों को भी भला बुरा सुनवाया।

अपना घर तो उजड़ा जाता है प्रतिक्षण,
पर औरों के घर बनवाने का है बल।
मैं गड़हा और समुन्दर दोनों साथ साथ।
मैं सुंदर और असुंदर दोनों साथ साथ।

अपनी गँवई का नाम लिया करता हूँ।
पर 'उस' कस्बे का काम किया करता हूँ।
मकई बजरो को हूँ सुंदर बतलाता,
पर बिस्कुट अण्डा ही मुझको है भाता।

मित्र हूँ, कि हूँ शत्रु, न तुम समझोगे,
मैं पंचपात्र में हूँ एक्का नंबर वन।
मैं चंदन और लवेण्डर दोनों साथ साथ।
मैं सुदर और असुंदर दोनो साथ साथ॥

———

वे दोनों—

पढ़ा करते है वेदान्त,
रात दिन नीरस मन मनमन।
घूमना उनको भाता है
अँधेरे में उपवन उपवन।

× × ×

रहा करते "दर्शन" मे व्यस्त
न करते है उनका दर्शन।
करेंगी फिर न भला क्यो वे
स्वयं ही अपना अनुरंजन।

× × ×

इन्हें मन्दिर मे पावेंगे
उन्हें सिनेमा या क्लब में आप!
चिढ़ा करती हैं इनकी मॉं;
चिढ़ा करते है उनके बाप।
अजब यह गठ बन्धन अनमेल, एक अद्भुत है मेल हुआ।
बहुत चाहा गैरों ने किन्तु, न इनसे उनमे मेल हुआ॥

जिसमें नहीं छुट्टियाँ स्कूल मे हों,
वह सावन की ऋतु सावन ही नहीं!
नहीं मूल से व्याज विशेष जो ले,
वह सेठ है ठेठ महाजन ही नहीं!
जिसमें कवियों की जमात जुटी
करती कविता मे निवेदन ही नहीं!
वह मुण्डन मुण्डन ही नहीं है
कनछेदन भी कनछेदन ही नहीं।

८

ये कवि !

निराले है ये कवि सारे !
किसी देश मे ऐसे कविगण हुए नहीं उत्पन्न !
जैसे इस हिन्दी भाषा के कविगण गुण सम्पन्न !
गर्व इन पर हम है धारे !
निराले हैं ये कवि सारे !
स्वार्थ रहित है इनका जीवन,
त्याग पूर्ण है देह !
कोई कभी भला कर सकता--
है इसमे सन्देह !
निराशा-नभ के हैं तारे !
अजब हिन्दी-नेता सारे !!
सदा भ्रमण करते रहते है
घर की तनिक न याद !
कभी बनारस, कभी आगरा
कभी एलाहाबाद !
कभी पटना, छपरा प्यारे
निराले है ये कवि सारे !

मुण्डन हो या हो कनछेदन,
या प्रदर्शिनी 'भोड़ी !
कौन जगह है जिसे कि इन
हिन्दी कवियों ने छोड़ी ?
फिरा करते मारे मारे !
निराले हैं ये कवि सारे !!

× × ×

पुरस्कार दस पाँच थमा दो
दे दो इण्टर क्लास !
गुड़ पर मक्खी के समान ये
दौड़ेंगे सहुलास !
बुरे क्यों पण्डे बेचारे ?
निराले हैं ये कवि सारे !

———

उल्फत

मुझको क्या तू ढूँढ़े रे बन्दे ! मैं तो तेरे पास मे।
ना मैं सिनेमा, न मै थियेटर, न टिकट, ना फ्री पास मे।
ना गाँधी में, ना जिन्ना मे, ना राजेन्द्र, सुभाप मे।
ना खद्दर मे, ना चरखा मे, ना मोहर, चपरास मे।
ना प्रोफेसर में, ना टीचर मे, ना स्टुडेण्ट, ना क्लास मे।
ना मलमल में, ना मखमल मे, नही सिल्क या ग्लास मे।

❀ ❀ ❀

मुझे ढूँढना चाहै जो तू पलभर की तालास मे !
तो त जा ससुरार रे बन्दे, ढूँढ ससुर औ सास मे ॥

कबीर के कुछ और दोहे

स्वयं लाट जाचक भये, दिया द्रव्य इफरात !
तातें 'सर' भये सेठजी, दिया दूर नहि जात !!

दाढ़ी बाढ़ै वदन यदि, आँगन बाढ़ै घास !
तुरत छील कर फेंकिये, यहि सज्जन-गुन खास !!

❀ ❀ ❀

धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय !
सेठ लाख देवैं न क्यों, 'सर' क्रिसमस मे होय !

दया कौन पर कीजिए, कापै निर्दय होय !
साईं के सब जीव हैं, कोंहड़ा और मकोय !!

मुखड़ा क्या देखै दरपन में ?

चूना कत्था कुछ न लगा है तेरे चन्द्रवदन मे !
मुखड़ा क्या देखै दरपन मे ?

पान-पीक-रञ्जित अधरो की ऐसी छटा वदन मे ;
ज्यो कुछ लाल मेघ छाये हो नीलवरन मेघन मे !!

टीचर हैं मेम्बर हैं कुछ है लेन-देन भी करते ,
मुंशीजी की कुछ मत पूछो, है मौला हरफ्न मे !!

मैं तो नहीं जानता लेकिन मुशीजी कहते हैं—
स्कूल मास्टरी से बढ़कर सुख है प्राइवेट ट्यूशन मे !

क्या है खूबी ? करैं खर्च क्यों पूजा और हवन !
कौन देवताओं को पूछै, इस मँहगी टेशन मे !

जयपुर से चिट्ठी आयी कल "आवे सम्मेलन मे",
मैंने उत्तर दिया ' वहाँ आ सकता हूँ सावन मे !"

मई जून में जयपुर जाना, अद्भुत पागलपन है !
पर पागल भी तो जायेंगे जयपुर-सम्मेलन मे ।

पागल भी तो हैं, मनुष्य ही वे भी हैं 'साहित्यिक,
नहीं चन्द्र तो, धूमकेतु ही इस साहित्यगगन मे !

एक भेडने कहा प्रगतिवादी कवि से यों जाकर—
अब मैं भी रह नहीं सकूंगी खूंटे के बन्धन मे !!

ऐ टीचर, क्यों फूल रहा है गर्वभरा यों मनमे '
बिना कसूर निकाल दिया जायेगा न, पचपन मे !!

चुहिये की पसन्द

गहन कानन के भीतर एक
बनाकर अपनी कुटी उदार
रहा करते थे ऋषि कोई
बडे थे जिनके उच्च विचार

सभी जीवों पर करते दया
किसी का करते कभी न नाश !
सभी उन पर रखते थे भक्ति
सभी उनका करते विश्वास !

एक दिन जब वे ऋषि-सत्तम
कर रहे थे सन्ध्या वदन !
गोद में चुहिया एक गिरी
कर रही थी सकरुण क्रन्दन

चील लेकर उसको थी उडी,
किन्तु गिर पडी भाग्य से वह !
ठीक ऋषि की ही गोदी में
हुई रचा इस भांति अहह !

अभय हो, मत क्रन्दन कर तू,
किसी भी रिपु से मत डर तू!
आ गयी है तू मेरे पास,
ले न अब तू ये लम्बे श्वास!

चील का तुझको अब क्या डर!
व बिल्ली कुत्ते से भी भय!
बनाता तुझे अभी मानव
कहा ऋषि ने हो उस पर सदय!

और ऋषि के यह कहते ही
हुई चुहिया वह सुकुमारी
पञ्च वर्षीया कन्या एक
बडी भोली भाली प्यारी!!

न ऋषि को था कोई सन्तान,
उसे ही अपनी पुत्री मान
लगे करने उसका पालन
प्रेम परिपूरित प्रमुदित मन!!

समय धीरे धीरे बीता,
हुए दस बारह वर्ष व्यतीत
हुई बाला विवाह के योग्य,
सोचने लगे महर्षि पुनीत!

स्वयं ऋषि को विवाह का ज्ञान
और उसके सुख का अनुभव।
नहीं था, वे थे अविवाहित
समस्या थी यह प्रति अभिनव !

लगे कहने कन्या से वे—
स्वयंवर अब होगा तेरा।
स्वय चुन ले तू अपना पति,
मान आदेश यही मेरा।

'देव दानव किन्नर नर नाग
बुलाता हूँ सबको मैं आज !
तुझे आवे जो व्यक्ति पसन्द
उसी से कर विवाह सानन्द !!

सुता बोली, "हे पिता सुजान,
बुलाने से सबको क्या लाभ।
व्याहिये सर्वोत्तम से और
हुई कुछ लज्जा से रक्ताभ !!

बहुत अच्छा, यह बिल्कुल ठीक
कहा ऋषि ने हो परम प्रसन्न !
बुलाता हूँ दिन कर को अभी
वही है सर्व शक्ति सम्पन्न !!

मन्त्र पढ़ कर रवि का ऋषि ने
किया तत्क्षण ही आवाहन!
हुए समुपस्थित दिनकर दिव्य
हुआ आलोकित वह कानन!!

"कहें, क्या आज्ञा है ऋषिवर्य्य,
दिवाकर बोले यह सविनय!
कहा ऋषि ने करना है मुझे
आपसे कन्या का परिणय"!

चाहती है तनया हो ब्याह
उसी से जो हो तेज निधान!
न जिससे कोई भी हो बड़ा
आप-सा और कौन श्रीमान्!!"

"भूलते हैं ऋषिवर यह आप!
कई हैं मुझसे भी बढ़ कर'
"कौन?" ये मेघ, इन्दु के गण
डालते हैं छाया मुझ पर!

और तब सब मेरा आलोक
छिपा-सा रह जाता है प्रात.।
मेघ मुझसे भी हैं बलवान्
घेरते मुझको इतस्ततः"!

चले रवि गये और ऋषिराज,
हुए कुछ क्षण को चिन्तामग्न !
बुलाने को मेघों को हुए
मन्त्र पढ़ने मे फिर संलग्न !!

छा गयी क्षण भर में ही घटा
तपोवन का अब रूप नया !
सहित मेघों के स्वयं महेन्द्र
वहाँ कानन मे आ पहुँचा !!

करे ऋषिवर ! प्रणाम स्वीकार
दास को क्या होता आदेश !
कहा ऋषि ने है सुरपति आप
आप मे गुण हैं भरे अशेष !!

आपके मेघो के बल से
स्वयं रवि भी घबड़ाते है !
आप क्या यह मेरी - कन्या
प्रेमपूर्वक अपनाते हैं !

बलि हूँ, सुरपति भी हूँ देव !
मेघ मेरे प्रलयंकारी !
किन्तु मुझसे भी बली अनेक
पडे हैं बडे बड़े भारी !

मेघ मण्डल को मेरे तुरत
भगाते पवनदेव ऋषिराज!
बात जो सच है वह कह दी
मुझे तो आज्ञा देवे आज!!

गये सुरपति मेघों के संग,
हुई ऋषि की कुछ न्यून उमंग।
किन्तु फिर लगे मन्त्र पढ़ने
वेग से वायु लगा बहने!

तुरत समुपस्थित हुए समीर!
धन्य हूँ ऋषि-दर्शन कर आज!
कहें, किस सेवा के हूँ योग्य
करूँगा यदि कर पाऊँ काज!!

"वाह यह भी कहने की बात,
दिवाकर से, सुरपति से ज्ञात।
आपका है प्रभाव हे पवन!
न कहता है अपने से गान!!

स्वयं दिनपति (सुरपति ने ही
कही मुझसे यह आकर बात!
आप ही सबसे बढ़कर हैं
आप ही जगपोषक प्रवदान!

आप ही के कारण संसार
प्राण धारण कर पाता है!
मुझे अपनी कन्या देना
आप ही को अब भाता है!

"ठीक है, जो कहते हैं आप,
किन्तु मुझसे भी बढ़कर पात्र।
हिमालय विन्ध्य आदि गिरि है
हिला सकता न जिन्हें तिलमात्र।

अतः मैं गिरियों के रहते
करूँ कैसे अनुचित अभिमान।
करें, हिमगिरि सुमेरु सम को
कृपा कर ऋषिवर कन्यादान॥

वायु जब चले गये तब ऋषि
बहुत ही मन मे घबड़ाये।
एक से एक पड़े हैं बड़े
जान कर यह वे चकराये॥

बुलाया गिरि को भी इस बार
कई आये पाकर आदेश!
स्वल्प, गुरु, हिम-शोभित ऊँचे,

अहो ! गिरि होकर भी हम आज.
धन्य हैं पाकर तव दर्शन !
कहो ! ऋषिवर क्या हमसे काम
हुए हम सब पवित्र पावन !

वतावो पहिले तुम सब मुझे
कहीं तुमसे भी बडा अपर !
देव दानव, गन्धर्व गिरिन्द ?
नाग नर या कोई किन्नर ?

सोचने लगे सभी पर्वत,
पुनः बोले हाँ आया याद !
और तो नही किन्तु चूहे
हमे कर देते हैं वर्बाद !

खोदते ही रहते हैं दिल
खिसकते ही रहते हैं दल !
सुदृढ कितने चट्टान गिरे.
शिलाएं होती जाती कन।

अतः अब हम सब जाते हैं
वुलावे चूहे को ही आप !
वात सचसच सब वतला दी
अतः आज्ञा दे हे निष्पाप !!

इधर दिनकर, सुरपति औ मेघ
पवन गिरिवर सब थे आये!
किन्तु कन्या के मन का तनिक
न आकर्षण थे कर पाये।

किन्तु कन्या ने ज्यों ही दिव्य
नाम चूहे का सुना पवित्र।
खिल पड़ी, कियामन्द मुस्कान,
दशा उसकी हो गयी विचित्र॥

कहा ऋषि से—हे पिता सुजान
व्यर्थ अब मत होवें हैरान।
बनाकर फिर चुहिया मुझको,
करें चूहे को कन्या-दान॥

और ऋषिवर ने किया यही
एक चूहे को बुलवा कर।
पुनः कन्या को चुहिया बना
किया उससे विवाह सत्वर!

धन्य चुहिया, तू अतिशय धन्य।
धन्य तेरा स्वजाति अनुराग!
एक चूहे के कारण किया,
इन्द्र तक को भी तूने त्याग!!

———

चत्वारो मूर्ख पण्डिताः ।

कथा है बहुत बहुत प्राचीन
सुनो बच्चों तुम इसे सहेल !
न तब थे वायुयान या तार
न निकली थी मोटर या रेल !

मगध था एक प्रान्त अनमोल
जिसे कहते है आज विहार !
वहाँ के नलग्राम के पास
रहा करते थे पण्डित चार !!

और उन चारो को हीं, सुनो,
पुत्र था एक एक अभिराम !
चाहते थे उनके वे पिता
बनाना उनको विद्याधाम !!

न कोई कालेज था या स्कूल
न संस्कृत का ही विद्यालय !
पढ़ावे बच्चों को वे [illegible]
सदा रहते थे चिन्तामग्न !"

पूछ तुम सकते हो बच्चों
प्रश्न कर सकते हो ऐसे ?
न था विद्यालय ही तब पिता
हुए उनके पण्डित कैसे ।

यहाँ 'पण्डित' से मेरा भाव
न कोई विद्वज्जन से है !
यहाँ पण्डित से मेरा भाव
बालको ! बस 'बाभन' से है !

और वे चारो बाभन एक—
दूसरे के थे विश्वासी ।
सोच कर यही किया निश्चय,
भेज दें बच्चो को काशी !

वहीं काशी में चारो पुत्र,
पढ़ेंगे छओ शास्त्र सानन्द !
और फिर अध्ययन का काम
करेंगे वे आकर स्वच्छन्द !

और फिर नलग्राम के भी
बनेंगे बालक पण्डित विज्ञ !
सभी साक्षर हो जावेंगे
रहेगा एक नहीं अनभिज्ञ !

करेंगे गुरु की सेवा से।
तभी पावेंगे मेवा ये!
लगे कहने वेरी वेरी
लाभ क्या करने से देरी!

और फिर वे चारो लडके,
नाम जिनके थे ये ही चार।
पलोटन, लोटन, घोटन और
निकोटन—क्षणमें हुए तयार॥

गये काशी, फिर वहाँ महन्थ
भकोसानन्दाश्रम के पास!
बडी श्रद्धा से होकर शिष्य
भक्ति से करने लगे निवास।

मिला करता था भोजन दिव्य
हुआ सबका शरीर मोटा।
मठों में भोजन की क्या कमी
वहाँ क्या भोजन का टोटा॥

और फिर ज्यों ज्यों मोटे गात
हुए, त्यों त्यो प्रतिभा भी स्थूल।
हुई, जिससे जो जो पढ़ते
तुरत ही वह जाता था भूल॥

और पढ़ते ही क्या थे वे
तर्क संग्रह, श्रुत बोध नवीन !
नीति के भी पढ़ डाले ग्रन्थ,
बुद्धि पर होती गयी मलीन !!

मलिन क्यों बुद्धि नहीं होती
बिना समझे पढ़ते थे वे।
सुना करते थे जो कुछ नहीं
गुना उसको करते थे वे।

बहुत दिन यों ही हुए व्यतीत
सभी ने सोचा लौटे घर !
यहाँ आये हम सबको हुए
आज पूरे पन्द्रह वत्सर।

गुरुजी कहते हैं हमलोग
हो चुके हैं पूरे विद्वान् !
इसलिए अब हम लोग सभी
करें अपने घर को प्रस्थान !

चले घर को फिर चारो मित्र
पलोटन, लोटन घोटन और
मिकोटन जो अपने को थे
समझते बस पण्डित-शिरमौर !!

गये होंगे थोड़ी ही दूर
मिला चौराहा उनको एक।
कौन-सी पकड़े राह, सभी यही
सोचने सभी लगे सविवेक।

इधर इतने में ही कुछ लोग
महाजन, सेठ अगरवाले।
जा रहे थे श्मशान की ओर
फूँकने कोई मुर्दा ले।

खोलकर पोथी लोटन ने
कहा—देखो है यही लिखा।
"जिधर से गये महाजन लोग
वही सबसे उत्तम पन्था*।"

और वे, उन बनियों के साथ
वहाँ आये था जहाँ श्मशान!
कहो कैसे ये चारो मित्र!
अनूठे थे पण्डिता विद्वान्॥

---

*"महाजनोयेन गतः स पन्था" अर्थात् जिस मार्ग पर महाजन (महापुरुष) चलें, वही मार्ग अनुकरणीय है! यहाँ लोटन आदि ने महाजन का अर्थ 'बनिया' समझा।

"यहाँ अब क्या हम करें विचार
यही करते थे जब वे मित्र।
दिखाई पड़ा ऊँट तब तक,
उन्हें यह जन्तु लगा सुविचित्र?

सोचने लगे सभी हो मौन।
जीव परमाद्भुत है यह कौन?
तीव्र है इसकी कितनी चाल।
पैर हैं इसके बड़े विशाल!!

पलोटन ने पुस्तक खोली
कहा—देखो है साफ लिखा
धर्म की गति होती है तीव्र
धर्म सबसे सत्वर चलता।

"धर्म है यही, धर्म है यही
यही है धम, यही है धर्म"
उठे चिल्ला वे चारो मित्र
पा लिया हम लोगो ने मर्म।"

"धर्मस्य त्वरिता गतिः" धर्म उन्नतिशील है, अथवा धर्मा उन्नति शीघ्र होती है।

पुनः उन लोगों ने देखा
वहीं चरता था एक गधा।
"अरे ! यह क्या" घोटन बोला !
निकोटन ने पोथा खोला !

अजी देखो, यह क्या है लिखा
दुःख में या जब पड़े अकाल,
या कि जन शत्रु घेर लेवे
लगा जब हो अभियोग विशाल !

या कि जब हो श्मशान में वास
वहाँ पर जो भी देवे साथ।
मान कर मित्र उसे अपना
प्रेम से उसे झुकाओ माथ।

यही उन सब लोगों ने किया,
चूम कर उस गर्दभ के पैर।
लगे कहने—तुम सच्चे मित्र
न तुममें हममें कोई बैर।

न तुमसा कोई है प्यारा।
रूप यह कैसा है न्यारा।
फलोटन तब तक पुस्तक खोल
लगा कहने यह सब है झोल॥

यहाँ देखो ऋषि कहते क्या
धर्म से करे इष्ट योजना!
अतः इस प्रिय गर्दभ को हम
धर्म संयुक्त करें, इस दम!

और उन चारो ने मिल
गधे के पकड़े चारों पाँव!
ले चले उसे घसीट घसीट
ऊँट वह चरता था जिस ठाँव!!

पलोटन ने पगड़ी खोली
पैर गर्दभ के बाँध तुरन्त!
ऊँट की दुम मे बाँधा उसे,
रेंकने गर्दभ लगा तुरन्त!!

कहीं से धोबी आ निकला,
हाल जो यह उसने देखा!
लिये लाठी दौड़ा कर क्रोध
पण्डितों से लेने प्रतिशोध!!

मित्र वे चारों ही घबड़ा
भगे लेकर पोथी पत्रा!
गिर पड़ा कोई सिर फूटा!
किसी का हाथ पैर टूटा!!

"इष्टं धर्मेणयोजयेत्" प्रिय वस्तु को धर्म के काम में लगावे!

रात भर भागे ही वे गये
सवेरे मिला एक फिर ग्राम।
सोचने लगे बहुत थक चुके
तनिक अब कर लेवें विश्राम।

गॉव वालों ने देखा इन्हें
कहा - हैं भाग्य हमारे धन्य!
अतिथि हैं आप हमारे हुए
अतिथि अपमानी बडा जघन्य!

अतिथि की सेवा परम पुनीत
कीजिए तनिक नहीं सकोच!
कीजिए भोजन औ विश्राम
हमारे घर को अपना सोच!!

गॉव के जमीदार साहब
पलोटन लोटन को ले साथ।
चले, बाकी दोनो से एक
महाशय बोले—हमे सनाथ

कीजिए बाकी दोनों जन।
हमारे घर होवे भोजन!!
सभी है सेवा के इच्छुक
आप दोजन तो जावे रुक!

यही फिर हुआ पलोटन और
निकोटन जमींदार के घर!
गये लोटन घोटन दोनो
साथ इन सज्जन के घर पर!

उच्च ये जमींदार धनवान
दूसरे सज्जन निर्धन व्यक्ति!
किन्तु निज शक्ति वित्त अनुसार
अतिथि पर थी दोनो की भक्ति!

सामने लोटन घोटन के
थालियो मे बाटी आयी!
नहीं खाया था पहिले कभी
वुद्धि दोनो की चकरायी!

कहा लोटन ने "घोटन मित्र!
कौन-सा है यह नया पदार्थ!
कहा घोटन ने पुस्तक खोल
देख लो इसका रूप यथार्थ!

लिखा इसमें है देखो साफ
छिद्र में होते वड़े अनर्थ!
छिद्र है इस पदार्थ मे सले!
करेंगे क्या खाकर यह व्यर्थ!

छोड़कर आसन दोनों उठे,
आतिथेयी तब घबड़ाया !
अरे यह क्यों जाते हैं
बहुत ही उसने समझाया !!

यहाँ लेकिन सुनता है कौन
किया धारण दोनों ने मौन !
चले, मिलता भोजन तज कर !
बिना समझे पुस्तक पढ़ कर !!

उधर उस जमींदार के यहाँ
निकोटन और पलोटन जी !
स्नान सन्ध्या कर भोजन हेतु
अभी जाकर थे बैठे ही !

कि तब तक चाँदी के दो थाल,
भरे सेवई से विशद विशाल !
सामने रखे गये त्यों ही
चौंक कर भागे दोनों ही !

अरे ! ये लम्बे लम्बे सूत !
साँप है, गोजर है या क्या !
न सेंवई खायी थी, प्रतिदिन
मिला केवल पूड़ी हलुवा !

"छिद्रेष्वनथा. बहुली भवन्ति !" छिद्र अर्थात् रहस्योद्घाटन या गुप्त बात फूटने से आपत्तियों का सामना करना पड़ता है ।

दाल रोटी या भात कभी
वहाँ काशी में खाते थे !
मिठाई पूड़ी हलवे ही
प्रेम से वहाँ उड़ाते थे !

किन्तु सेवई थी वस्तु
इसी से दोनों घबड़ाये !
कई क्षण तक दोनों संवस्त
खड़े थे केवल मुँह बाये !

निकोटन ने खोली पुस्तक
देख लो यदि न तुम्हें विश्वास !
अरे जो हुआ दीर्घ सूत्री,
हुआ उसका तुरन्त ही नाश !!

कहा लोगों ने कितना ही,
किन्तु भोजन पानी को त्याग !
चले दोनों, पथ मे मिल गये
शेष दोनो भी, धन्य दिमाग !

गॉव वाले हॅसते थे देख—
अजब हैं य 'पण्डित ज्ञानी !
सदा पुस्तक की लेते शरण
और करते हैं मनमानी !

"दीर्घ सूत्री विनश्यति" अर्थात् आलसी लोगों का नाश हो जाता है। इन दोनों ने समझा बटी बडी सूतवाली सेवई नाश कर देगी !

इधर ये चारों मित्र पवित्र,
क्षुधित प्यासे चलते थे राह!
कि तब तक नदी मिली मग मे,
पाट था चौड़ा, तेज प्रवाह!!

एक पत्ता आता था बहा,
खोल पुस्तक लोटन ने कहा—
"आ रहा है पत्ता जो यार।
हमें पहुँचा देगा उस पार"।

और यह कह कर कूदा वह
तुरत ही लोटन पत्ते पर
बह चला, देख उसे घोटन
खोल पुस्तक बोला सत्वर—

हो रहा हो जब पूरा नाश
बचा लेते पण्डित आधा।
काट लूँ सिर लोटन का मैं
दूर होगी इससे बाधा।

इस तरह घोटन ने सिर काट
लिया लोटन का

"आगमिष्यति यत् पत्रं तदस्मान् तारयिष्यति"
वह जो पत्र (सवारी) आ रहा है, हमें पहुँचा देगा। लोटन ने पत्र का अर्थ 'पत्ता' समझा।

चूनाचाटी

नाना के पावन पाँव पूज,
नानी पद को कर नमस्कार।
उस अण्डी की चादरवाली,
साली-पद को कर नमस्कार।

उस तम्बाकू पीने वाले के,
नयन याद कर लाल लाल।
डगडग सब हाल हिला देता,
जिसके खों खों का ताल ताल।

ले महाशक्ति प्रेस से कागज,
व्रत रखकर हिन्दुस्तानी का।
निर्भय होकर लिखता हूँ मैं,
पाकर दर्शन कृपलानी का।

मुझको न किसी का भय-बन्धन,
क्या कर सकता संसार सभी।
मेरी रक्षा करने को है,
सम्पादक का अखबार अभी।

स्याही कागज ब्लाटिंग लिए,
कर एकलिंग को नमस्कार।
स्वागताध्यक्ष करने बैठे,
अपना स्वागत भाषण तयार॥

घन घन घन घन घन गरज उठी,
घण्टी टेबुल पर बार बार।
चपरासी सारे जाग पड़े,
जागे मनिआर्डर और तार।

कविवर श्रीनारायन जागे.
दफ्तर में जगमोहन जागे।
घर घर कवि सम्मेलन जागे,
वेढव जागे, चन्दन जागे॥

जागे कनौजिया के कपूत,
प्रेस के कम्पोजीटर जागे।
दोहे जागे, छप्पय जागे,
कविता के सब अक्षर जागे॥

लिखते लिखते अपना भाषण,
स्वागताध्यक्ष फिर ठहर गया।
लाया चपरासी वह बोतल,
जिसको था लाने शहर गया॥

चपरासी बस आया ही था,
लेकर गिलास बोतल गोली।
तब तक स्वागत मन्त्री आये,
लेकर कुछ कवियों की टोली॥

सुनकर चरमर जूतों का स्वर,
बोतल के मुँह से काग उठा!
सब एक घूँट में पी डाला,
आँखों मे छा अनुराग उठा॥

छत पर गीली चादर ओढ़े,
रजनी भर यह तो सोता था।
घर भर मे बर्तन तोड़ फोड़,
मर्कट का नर्तन होता था!

सोकर उठने पर खाता था,
रसगुल्ला काला जाम यहीं।
सन्ध्या को फिर गमछा पहिने,
खाता था लँगड़ा आम यहीं॥

घर के अन्दर मदिरा पीकर,
करता था सारे अनाचार !
बाहर खद्दर का कोट पहन,
लेक्चर देता था धुवाँधार !!

वह भी कहता था जनता से,
कवियों का सम्मेलन होगा !
छायावादी कवि आयेंगे,
उनका भी मूक रुदन होगा !!

बोतल से सोडा उछल उछल,
टेबुल पर ज्यों गिरता छल छल।
वह कूद कूद लेक्चर देता,
जग कहता था उसको पागल !!

चिट पर चन्दा दाताओं के,
लिखता जाता था नाम सकल।
फिर गला फाडकर चिल्लाता था,
बतलाता था प्रोग्राम सफल।

वह आया था सम्मेलन के,
सारे दुखड़े यों रोने को !
या करने आया साफ तुरत,
मगही पानो के दोने को !!

कल के नीचे पल पल जाकर,

कुल्ला करता मुख धोता था।

फिर भी मुख पर उसके निशान,

कत्थे चूने का होता था !!

स्वागताध्यक्ष खुद लेक्चर दे,

बनता जाता था मतवाला।

मानों बच्चन सम्मेलन में,

पढ़ते हों अपनी मधुशाला !!

गाली के साथ निकलती थी,

मीटिंग से जनता मतवाली।

खाली 'हू हू हू हू' कर भी,

थे पीट रहे लड़के ताली !!

× × ×

टेबुल पर अपने हाथ पटक,

डायस के ऊपर घूम घूम।

'नॉयज़' करता था व्यर्थ बहुत.

पागल मनुष्य सा झूम झूम !!

भाषण के अन्दर खों खों कर,

खाँसने जभी लगता अपार !

झाँकती उसे थीं महिलाएँ,

चिक उठा उठाकर बार बार !!

दर्शक कोलाहल करते थे,
मानों भिन्नाते भिन्न मधुप।
पर किसे सुनाई पड़ता था,
उसका वह चिल्लाना 'चुपचुप'!!

धस से गिर जाता था वह,
था तोद नहीं सकता सम्हार!
मुसका उठतीं महिलाएँ,
हँस उठते थे लड़के लवार!!

वह चिल्लाता ही जाता था,
कहता था 'अच्छा आज शकुन'।
जो चन्दा दे दोगे तुरन्त,
कर देगा सारा काज शकुन!!

बिछवा दो कपड़े तूल लाल,
टँगवा दो माला फूल लाल।
रखवा दो कुर्सी स्टूल लाल,
रगवा दो सारा स्कूल लाल!!

तुम दौड़ो दौड़ो रखवा लो,
कवियों का सब सामान यहीं।
तुम भागो भागो ऐ लड़को,
लाओ सारा जलपान यहीं॥

'जलपान' शब्द यह सुनते ही,
लड़के सारे भरभरा उठे।
मुँह अन्दर पानी भर आया,
रोएँ रोएँ फरफरा उठे!!

दोनों से और कसोरों से,
बन गया वहीं पूरा होटल!
स्वागताध्यक्ष भी चकराया,
हो गया चित्त उसका चञ्चल!

तब तक सब कविगण आ पहुँचे,
ले गट्ठर लोटा डोर सकल!
लोटे ले लेकर निकल पड़े,
फौरन् खेतों की ओर सकल!!

सब शयन कक्ष की जय बोले,
दावत समक्ष की जय बोले।
उस पितृपक्ष की जय बोले,
स्वागताध्यक्ष की जय बोले!
"पूड़ी लाओ, पापड़ लाओ,
पेड़े लाओ, लाओ मगदल।"
'लाओ रबड़ी यह बोल उठा,
पुरवा पुरवा पत्तल पत्तल!!

———